इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट

समाचार पत्रिका

वर्ष 17, अंक 1

जनवरी से मार्च 2010

यह अंक

गणतंत्र में उनका हिस्सा

गायत्री आर्य

पहली किलकारी

प्रशांत कुमार दुबे

आई.एस.एस.टी.गतिविधियां

केवल निजी वितरण के लिए

भारतीय गणतंत्र के साठ साल बीत जाने के बाद भी करोड़ों की संख्या में ऐसी महिलायें मिल जायेंगी, जो संविधान और गणतंत्र शब्द से परिचित नहीं हैं। अर्थव्यवस्था में इन अदृश्य हाथों का बराबर का श्रम होने के बाद भी अदृश्य श्रम को कभी महत्त्व ही नहीं दिया गया है। लिंग भेद के कारण बहुत से अधिकारों और सम्मान से अभी भी वंचित हैं। यह लिंग भेद बाल्यावस्था से ही शुरू हो जाता है।

केवल 'घर का काम संभालती है' कि संज्ञा से विभूषित ऐसी अनेक महिलाओं के गणतंत्र में हिस्से के बारे में जानकारी दे रही हैं – गायत्री आर्य।

कठिन रास्तों पर, पहाड़ी गांवों और वर्षा के मौसम में जीवन रक्षक की भूमिका निभाने वाली इन दाईयों का खुद का जीवन आज असुरक्षित है। ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के आने के बाद से उन्हें प्रसूता का काम मिलना तो लगभग बंद हो ही गया है। जीविका के अन्य साधन भी सिमटते जा रहे हैं।

पारंपरिक ज्ञान–कौशल से सरकारी प्रशिक्षण प्राप्त एसबीए बनी ये दाईयां आज कठिन दौर से गुजर रही हैं। इसकी जानकारी दे रहे हैं – प्रशांत कुमार दुबे।

इसके साथ ही आईएसएसटी में विभिन्न विषयों पर चल रहे शोधकार्य, प्रशिक्षण कार्यक्रमों आदि की भी जानकारी मिलेगी।

गणतंत्र में उनका हिस्सा

गायत्री आर्य

साठ साल किसी भी व्यक्ति, समाज, देश और सभ्यता के जीवन में लंबा और महत्त्वपूर्ण समय है। स्त्रियां, बच्चे, दलित, आदिवासी जाति, जनजाति समूह आज भी संविधान के पूरी तरह से लागू होने के इंतजार में हैं। महिलाओं के नजरिए से इस गणतंत्र को परखना जरूरी होता जा रहा है। आज भी जिन परिवारों में स्त्रियां सिर्फ घर का काम संभालती हैं उन घरों के बच्चे परिचय के वक्त यही कहते हैं, 'पापा फलां–फलां हैं और मां कुछ नहीं करतीं।'यदि कुछ भी नहीं करतीं ? सवाल सामने से आए तभी खिसियाई–सी हंसी के साथ जवाब आता है 'मतलब घर का काम करती हैं...'। अन्यथा वह जवाब पर्याप्त है ही। आखिर यह जवान होता गणतंत्र उन असंख्य महिलाओं को यह भरोसा क्यों नहीं दिला पाया कि इस सबसे बड़े लोकतंत्र के स्थायित्त्व की नींव में उनकी ही सहनशक्ति है ? दुनिया की दूसरी बड़ी अर्थव्यवस्था के लिए उनका यह अदृश्य श्रम और भी न जाने क्या–क्या बराबर का जिम्मेदार है। इस विशाल गणतंत्र में घरेलू कामकाजी महिलाओं का एक विशाल हिस्सा कहां अपनी आभा ढूंढ पाता है भला ?

झुग्गी झोपड़ियों, कच्ची बस्तियों में पापड़ से लेकर खिलौने, छोटे–मोटे पुर्जे, कालीन, कांच, बीड़ी, माचिस आदि बनाने वाली करोड़ों औरतों के लिए संविधान और गणतंत्र दूसरे ग्रह के शब्द हैं। रोजाना दस–पंद्रह घंटे आंखफोड़ू काम करके भी सिर्फ हजार दो हजार महीने कमाने वाली औरतें नहीं जानतीं कि बराबर काम के लिए बराबर मजदूरी जैसा भी कोई कानून है। वे नहीं जानतीं कि उछलती अर्थव्यवस्था का क्या मतलब है ? और अर्थव्यवस्था की इस वृद्धि दर का उनके काम से भी कोई संबंध है या नहीं ? वे नहीं जानतीं कि हर रोज होने वाले अरबों–खरबों रुपयों के व्यापार की रीढ़ की हड्डी वे ही हैं। इस देश की समृद्धि, लोकतंत्र के स्थायित्त्व और गणतंत्र के विकास में उनकी भूमिका को, उन महिलाओं को कभी नहीं बताया गया। क्यों ? कहीं लिंगभेद और गैरबराबरी जैसे कानूनों पर सवाल न उठा दें। कहीं अपने बराबरी के हक के लिए हड़ताल न कर दें।

कुल खेतिहर काम का करीब छियालिस प्रतिशत काम करने वाली इस देश के करोड़ों महिला किसानों के घरों में आज भी न तो भरपेट खाना है, न पैसे। अपने देश की रोजी–रोटी और तरक्की में दिन–रात खपने वाली इन महिला मजदूरों, किसानों और गृहणियों के चेहरों पर अभिमान और फख्र की झलक नहीं दिखती। कह सकते हैं, फिर भी गणतंत्र के उत्सव में शामिल होने की दूसरी वजहें हैं। जैसे, लड़कियों को पढ़ने और बढ़ने के जितने मौके आज मिले हैं पहले नहीं थे। व्यकितगत आजादी का स्वाद जिन महिलाओं ने आज चखा है वे पहले इसकी कल्पना भी नहीं कर सकती थीं।

संपत्ति में बराबरी का हक, दहेज विरोधी कानून, घरेलू हिंसा निरोधक कानून, बाल–विवाह पर रोक, सती प्रथा की समाप्ति, रोजगार का हक, बराबर काम के लिए बराबर वेतन, हर तरह के शोषणों से निपटने के लिए हमारे हक में बने तमाम तरह के सख्त और नरम कानून वगैरह–वगैरह। हर वर्ग की औरतें नौकरी करने और कमाने लगी हैं। उनकी कमाई पर उनका कितना हक है यह अलग बहस का मुद्दा है। लेकिन अपने पैसे पर हक न होने के बावजूद घर से निकलने और तरह–तरह के काम करने से उनमें एक आत्मविश्वास आया है। पितृसत्ता या कोई भी सत्ता औरतों और लड़कियों से उनके हुनर और मेहनत से कमाया हौसला नहीं छीन सकती।

लेकिन इतने सारे सोने के सिक्के जैसे कानून हाथ में होने के बावजूद जीवन के कई इलाके उनके हाथ से छूट गए हैं। गणतंत्र न सिर्फ लिंग, भाषा, धर्म, जाति, क्षेत्र के आधार पर भेदभाव करता है, बल्कि स्त्री–स्त्री के बीच भी भेद करता है।

चारों तरफ ऐसी लड़कियों की रौनक है जो गर्भावस्था और ऋतुकाल में भी हर मौसम में देश–दुनिया नापती फिर रही हैं। लेकिन दिल्ली से कुछ सौ किलोमीटर पर एक दूसरी दुनिया ही नजर आती है। उनके पास सैनिट्री नैपकिन पहुंचना तो दूर लड़कियों के लिए शौचालय तक नहीं हैं। पूरे दिन स्कूल में पेशाब रोकने से होने वाली बीमारी के लिए क्या यह गणतंत्र खुद को जिम्मेदार मान सकता है ? बाल–विवाह पर रोक के तमाम कड़े कानून बने हैं। इसके बाद भी अक्षय तृतीया पर लाखों बाल–विवाह हर साल होते हैं। बचपन में ही मां बनने की अकल्पनीय पीड़ा झेलने वाली बच्चियों के लिए क्या इस समाज और देश में से कोई भी खुद को दोषी ठहराता है, ठहरा सकता है ?

और बच्चियां.... जो इस गणतंत्र की आर्थिक रीढ़ को मजबूत करने में अपनी भूमिका निभाती आई हैं, निभाती जा रही हैं। उसे खुलकर स्वीकार करने की हिम्मत तक नहीं दिखा रहा है यह गणतंत्र। विदेशी पर्यटन को बढ़ाने के लिए मुफ्त व सस्ती सेक्स सेवाओं के लिए, इस देश की चौदह साल से छोटी करीब इक्कीस प्रतिशत बच्चियां हलाल होती हैं। खेतों में महिलाओं के कुल काम ४५.५७ प्रतिशत का २० प्रतिशत काम चौदह साल से कम उम्र की बच्चियां ही करती हैं। कालीन, फुटबाल, माचिस, बीड़ी, अगरबत्ती, जरी, चूड़ियां आभूषण बनाने वाले कारखानों में काम करने वाली बच्चियों की गिनती इस गणतंत्र में कहां है ? जीवन के दूसरे क्षेत्रों की तरह बाल श्रम में भी बालकों की अपेक्षा बच्चियों ने काम का ज्यादा बोझ उठाया हुआ है। जिस देश में करोड़ों माओं के दृश्य और अदृश्य श्रम की गिनती नहीं, वहां उन छोटी बच्चियों के काम की गिनती भला कैसे होगी ?

जैसे साठ साल जंगल में रहने के बाद भी जंगल और वहां की जमीन आदिवासियों की नहीं हुई, वैसे ही स्त्रियां भी अपने घरों में अपनी जमीन पर लिंगभेद के कारण बहुत से अधिकारों और सम्मान से अभी भी वंचित हैं। क्यों उन्हें कभी भी इन साठ सालों में यह अहसास नहीं दिलाया गया कि वे देश के आर्थिक ढांचे की रीढ़ हैं ?

अपने जीवन के बारे में निर्णय लेने की थोड़ी–थोड़ी आजादी महिलाओं को मिलने लगी है। लेकिन दूसरी तरफ उनके अस्तित्त्व और व्यक्तित्त्व के लिए ढेर सारी नकारात्मक चीजों को खतरनाक तरीके से प्रोत्साहन नहीं तो सहयोग दिया जा रहा है।

जनसत्ता से साभार

पहली किलकारी

प्रशांत कुमार दुबे

बच्चे के जन्म के बाद पहली किलकारी सुनकर घरवालों को शुभ समाचार देने वाली दाईयां आज बेकार हो चली हैं। इन दाईयों पर तिहरी मार है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन बनने के बाद से उन्हें प्रसूति का काम मिलना तो लगभग बंद ही हो गया है। जचकी का जो काम ये दाईयां कर रही थीं, वही काम आज आशा नामक एक नए संगठन की कार्यकर्ता करने लगी हैं। सरकार ने जब आशा नामक एक नई संरचना गांवों में खड़ी करने का विचार किया, तब उसने इन दाईयों के बारे में क्यों नहीं सोचा ? आज मध्यप्रदेश में कोई पचार हजार गांवों में लगभग इतनी ही संख्या में प्रशिक्षित नई दाईयां अपनी सेवाएं दे रही हैं।

ऐसा लगता है कि सरकारें हर उस तंत्र को खत्म कर रही हैं, जो कि समाज की कोख से उपजे हैं। दाई का काम भी उनमें से एक है। सरकार जाने–अनजाने बड़े व्यवस्थित ढंग से इन संरचनाओं को किनारे कर नई समानांतर व्यवस्थाएं खड़ी कर रही है। इससे समाज में टकराव बढ़ रहा है। सरकार नया ढांचा कुछ ऐसा भी बना सकती थी कि उसमें वर्षों से काम कर रही दाईयों के सम्मानजनक जीविकोपार्जन के विकल्प, रास्ते सुरक्षित बने रहते। ऐसा न किए जाने पर

सुरक्षित मातृत्त्व के सरकारी प्रयासों को भी झटका लग सकता है।

मध्य प्रदेश की मातृ मृत्यु दर ३७९ प्रति लाख है। यानि प्रति वर्ष प्रसव के दौरान उत्पन्न जटिलताओं के कारण प्रदेश में लगभग ६००० महिलाएं असमय मृत्यु को प्राप्त हो जाती हैं। वर्ष २००५ में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के लागू होने के बाद से घरों में होने वाली जचकी के बदले अस्पताल में ले जाने को बढ़ावा दिया जाने लगा। दाईयों ने भी इस व्यवस्था में शामिल होते हुए घर में जचकी न कराकर आसपास के अस्पतालों में ले जाने पर जोर दिया। महिलाओं को, उनके परिवारों को इसके लिए खुद प्रोत्साहित करना शुरू किया। दाईयां प्रसूताओं के साथ अस्पतालों तक आने लगीं। इसके बदले में उन्हें सरकार की ओर से कुछ प्रोत्साहन राशि दी जाने लगी थी और प्रसूता को मिलता था उचित इलाज। पहले दाईयां जब प्रसव कराने का काम घरों में करती थीं तो उन्हें उसके बदले में कपड़े, सम्मानजनक राशि तथा गेहूं, अनाज वगैरह मिला करता था, जिससे उनका व उनके परिवार का भरण–पोषण होता था। उस व्यवस्था में एक बड़ी बात यह भी थी कि ये दाईयां प्रसूता को भावनात्मक और मानसिक रूप से मां बनने के लिए तैयार करने का भी काम करती रही हैं।

पीढ़ी दर पीढ़ी अपने पारंपरिक ज्ञान, कौशल के साथ काम करने वाली दाई के काम को सरकारों ने भी पहचाना था। उन्हें ३० दिनों का एक नया प्रशिक्षण भी दिया गया। इसके बाद माना गया था कि गांव में अपने पारंपरिक ज्ञान–कौशल से काम करने वाली दाई तकनीकी रूप से समृद्ध भी हो गई है। सरकारी भाषा में कहें तो दाई अब टीबीए (ट्रेडीशनल बर्थ अटैंडेंट) से एसबीए (स्किल्ड बर्थ अटैंडेंट) बन गई थी !

इसी दौरान गांव में एक नए ढांचे का उदय हुआ। इसका नाम सरकार ने आशा रखा है। यह सुंदर–सा नाम अंग्रेज़ी के एक्रिडेटिड सोशल हेल्थ एक्टिविस्ट के पहले अक्षर लेकर बना है। इसमें उसी गांव की ऐसी महिला को चुना जाता है, जो कि गांव में स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ावा देने का काम करेगी। अब गांव की प्रसूताओं को प्रसव के लिए शासकीय संस्थाओं तक लाने के लिए दाई के अलावा आंगनवाड़ी कार्यकर्ता और आशा कार्यकर्ता भी सामने आईं। लेकिन इस व्यवस्था में सरकार ने कहीं भी इनकी भूमिकाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया है। आज गांव में जो काम दाई कर रही है वही आशा कार्यकर्ता का काम है और वैसा ही काम लगभग आंगनवाड़ी कार्यकर्ता का है। लेकिन प्रसूताओं को अस्पताल तक पहुंचाने में वित्तीय मदद अब केवल 'आशा' को ही मिलती है। इससे गांवों में इन कार्यकर्ताओं में आपस में झगड़े बढ़ रहे हैं। आशा, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता और दाईयों के बीच दूरियां बढ़ चली हैं।

मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के सोहागपुर विकासखंड के रेवामुहारी गांव की दाई प्रेमबाई हैं। वे कहती हैं कि आज तक हम घरों में प्रसव कराते रहे हैं। पीढ़ियों से। अब हम पर दबाव यह है कि घर में मत करो। जच्चा को अस्पताल में पहुंचाओ। चूंकि योजना में पैसा भी है तो प्रसूता भी चाहती है कि अस्पताल में जाए। प्रेमबाई कहती हैं कि सरकार की इस व्यवस्था से तो हम लोग भूखे मर जाएंगे। सरकार को यदि यही करना था तो फिर हमें शिक्षण क्यों दिया गया ?

छोटाडूंडा गांव की सावित्री का कहना है कि हमारे ऊपर तो तिहरी मार है। स्वास्थ्य मिशन के आने के बाद से उन्हें प्रसूता का काम मिलना लगभग बंद ही हो गया है। अधिकतर दाईयां बंसकार/वाल्मीकि समुदाय की हैं। इन्हें अपने पैतृक धंधे के लिए पहले सरकार की ओर से १०० बांस मिलते थे। लेकिन अब २० बांस मिलते हैं। इससे अब पर्याप्त मात्रा में टोकरी, डलिया, सूपा आदि नहीं बना पा रहे हैं। फिर बाजार में प्लास्टिक के सामान ने भी इनके काम पर बुरा असर डाला है।

दडींगा गांव की छोटीबाई कहती हैं कि गांवों में रोजगार गारंटी योजना के कामों में हम काम मांगते हैं तो हमें काम नहीं दिया जाता है। हमने फरवरी २००९ में आवेदन देकर काम मांगा था। लेकिन आज तक पंचायत ने हमें काम नहीं दिया है। फिर हमने बेरोजगारी भत्ते की मांग की। पर वह भी नहीं दिया गया। हाथ का काम छिन गया, नया कुछ मिला नहीं।

दुर्गम मार्गों पर, पहाड़ी गांवों और वर्षा के मौसम में मात्र यही दाईयां जीवन रक्षक की भूमिका निभाती हैं। सोहागपुर में काम कर रही संस्था दलित संघ ने दाई अधिकार संघर्ष समिति का गठन किया है। शोभापुर की मधुबाई कहती हैं कि ये मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री भी हमारे ही हाथ से पैदा हुए हैं। उन्हें हमारे बारे में गंभीरता से सोचना चाहिए।

गांधी मार्ग से साभार

भावी नेताओं और प्रशिक्षकों के रूप में किशोरियों की जागरूकता

अहमदाबाद स्थित 'इंडियन एकेडमी फॉर सेल्फ एम्प्लॉयड वीमेन एसोसिएशन' द्वारा किशोर युवतियों को भावी नेताओं और योग्य प्रशिक्षक बनाने के लिए चल रहे कार्यक्रम का मूल्यांकन अध्ययन पूरा हो चुका है। सेवा एकेडमी को रिपोर्ट सौंप दी गई है। अहमदाबाद शहर की इन युवतियों पर इस जागरूकता कार्यक्रम के असर को समझने के लिए प्रश्नावली और केस स्टडी पर आधारित मूल्यांकन किया गया। यह अध्ययन दो चरणों में किया गया – बेसलाइन और एंडलाइन सर्वे। सन् २००८ में बेसलाइन सर्वे हो चुका है और डेढ़ वर्ष बाद सितंबर २००९ में एंडलाइन सर्वे किया गया।

आई. टी. अपग्रेडेशन , प्रशिक्षण, शोध और प्रचार–प्रसार के लिए सहयोग

आईएसएसटी ने सूचना और तकनीक के क्षेत्र में अपग्रेडेशन के साथ ही आईएसएसटी की शोध और प्रचार–प्रसार की क्षमता बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रशिक्षण लिए हैं।

बैंगलोर में आईटी के क्षेत्र में निर्धन वर्ग के युवकों पर किया गया अध्ययन भी इसी प्रोजेक्ट का एक हिस्सा है। अध्ययन के लिए बैंगलोर के मलेश्वरम इलाके को चुना गया। इस अध्ययन के अंतर्गत इस वर्ग के बच्चों के लिए उपलब्ध आईटी संबंधित कार्यक्रम और कार्यक्रमों तक उनकी पहुंच का मूल्यांकन किया गया।

यह मूल्यांकन अध्ययन सर्वे के माध्यम से किया गया। इस सर्वे में मलेश्वरम में चल रहे विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों में से चयनित कार्यक्रमों का सर्वे और मुख्य संचालकों से पाठ्यक्रम, पाठ्यक्रम की अवधि, फीस और प्रशिक्षण पूरा होने पर रोजगार पाने में इन प्रशिक्षण संस्थाओं की भूमिका आदि की जानकारी एकत्र की गई ।

काम के तरीके और कार्यक्रमों के असर को समझने के लिए आईटी क्षेत्र में कार्यरत कुछ युवकों से भी बातचीत की गई। इस क्षेत्र में कार्यरत विभिन्न स्वैच्छिक संस्थाओं के सहयोग से यह सर्वे किया गया। इसके साथ ही इस विषय से संबंधित उपलब्ध साहित्य की समीक्षा भी की गई।

अध्ययन के निष्कर्षों पर चर्चा के लिए आईएसएसटी, बैंगलोर द्वारा १५ फरवरी २०१० को एक वर्कशॉप आयोजित की गई। यह वर्कशॉप यूनाईटेड थियोलॉजिकल कॉलेज में थी। आईएसएसटी, दिल्ली और बैंगलोर के शोधकर्ताओं ने अध्ययन के निष्कर्षों को प्रस्तुत किया। गोष्ठी में इस क्षेत्र में निर्धन वर्ग को ज्यादा से ज्यादा अवसर मिलें और परिस्थितियों में सुधार हो – इस पर भी चर्चा हुई।

वर्कशॉप में सरकारी विभाग के प्रतिनिधियों, विभिन्न संगठनों, बुद्धिजीवियों, छात्र–छात्राओं और शोधकर्ताओं ने हिस्सा लिया।

इस अध्ययन और वर्कशॉप के लिए इंटरनैशनल डेवलपमेंट रिसर्च सेंटर से सहयोग मिला।

समान मजदूरी अधिनियम : एक अध्ययन

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट ने हाल ही में समान मजदूरी अधिनियम (१९७६) का समीक्षात्मक अध्ययन किया है। इस अध्ययन में अधिनियम के अंतर्गत दर्ज विभिन्न मामलों का विश्लेषणात्मक और निम्नतम मजदूरी का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इसके साथ ही अधिनियम के क्रियान्वयन से संबंधित मुद्दों को समझने के लिए ट्रेड यूनियन के नेताओं और वकीलों से बातचीत की गई।

अध्ययन के निष्कर्षों पर चर्चा करने के लिए एक वर्कशॉप आयोजित की गई। यह वर्कशॉप २६ मार्च २०१० को इंडिया हैबिटेट सेंटर के सभागार में हुई। इस वर्कशॉप में अध्ययन के निष्कर्षों के अलावा अधिनियम की परिभाषा, अधिनियम के उपयोग की सीमाओं और उसके सामाजिक असर पर भी चर्चा हुई। इस वर्कशॉप में इस विषय से जुड़े विशेषज्ञों, वकीलों तथा अन्य महिलाविदों, शोधकर्ताओं ने हिस्सा लिया।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सहयोग से यह अध्ययन किया गया।

हिमाचल प्रदेश, केरल और राजस्थान : नरेगा में महिलाओं की भागीदारी और असर

उपरोक्त अध्ययन में महिलाओं की भागीदारी के विभिन्न स्तर, कार्यक्रम का विस्तृत असर और स्थानीय संदर्भ में दिखने वाले विभिन्न असर को समझने का प्रयास किया जाएगा। राजस्थान की रिपोर्ट अप्रैल २०१० तक पूरी हो जाएगी। राजस्थान के सिरोही जिले के आबू रोड ब्लॉक में महीखेडा और निचलागढ़ सर्वे के लिए चुने गए। महत्त्वपूर्ण जानकारी के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया। घर के मुखिया या मुखिया के समकक्ष किसी अन्य व्यक्ति से यह जानकारी ली गई। इस विषय को गहराई से समझने के लिए नरेगा में कार्यरत स्त्री–पुरुषों, पंचायत सदस्यों, मेट्स और अन्य लोगों के साथ समूह चर्चायें की गई। फिलहाल शोधकर्ता तथ्यों के विश्लेषण के काम में जुटे हैं।

पटरी पर सामान बेचने वाले : एक अध्ययन

आईएसएसटी ने अहमदाबाद शहर में पटरी पर सामान बेचने वालों पर एक अध्ययन किया है। सेवा महिला ट्रस्ट ने अहमदाबाद शहर में ५७११० ऐसी महिलाओं को संगठित किया है, जो पटरी पर सामान बेचती हैं। इसका मुख्य उद्देश्य इनकी जीवकोपार्जन की सुरक्षा और उन्हें मुख्यधारा में लाना है। सेवा महिला ट्रस्ट को अपने इस उद्देश्य में कहां तक सफलता मिली है, उसके काम के असर को समझने के लिए आईएसएसटी द्वारा मूल्यांकन अध्ययन किया गया। यह अध्ययन बेस लाईन और एंडलाईन सर्वे पर आधारित है। सितंबर २००९ में बेसलाईन सर्वे पूरा हो चुका है और सेवा को उसकी रिपोर्ट सौंप दी गई है। एंड लाईन सर्वे २०११ में होगा।

जन–नीति

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट ने २५–२६ मार्च को इंडिया हैबिटेट सेंटर में दो दिवसीय वर्कशॉप का आयोजन

किया। यह वर्कशॉप सेवा भारत और इंटरनैशनल डेवलपमेंट रिसर्च सेंटर (आईडीआरसी) के सहयोग से की गई। कार्यशाला में प्रतिनिधियों ने जन–नीति बनाने के लिए विचारों – सुझावों का आदान–प्रदान किया। इस कार्यशाला में फेमिनिस्ट इकानॉमिस्ट समिति की सदस्याओं, महिलावादी छात्राओं, बुद्धिजीवियों और नीति निर्धारकों ने हिस्सा लिया।

जेंडर एंड पार्टिसिपेटरी डेवलपमेंट: इवेल्यूएशन कन्सर्न

आईएसएसटी, इंटरनैशनल रिसर्च सेंटर के आर्थिक सहयोग से एक अध्ययन कर रहा है। इस प्रोजेक्ट का मुख्य उद्देश्य एक वर्कशॉप आयोजित करना है। इस वर्कशॉप में मुख्य रूप से महिलाओं पर किए जा रहे अध्ययनों को पारदर्शी और जेंडर संवेदनशील बनाने के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार पर चर्चा की जाएगी।

बस्ती विकास केंद्र

सन् २००० में आईएसएसटी द्वारा पूर्वी दिल्ली में बस्ती विकास के लिए शुरू किए गए कामों का लगातार विस्तार हुआ है। जानकारी, शिक्षा और संवाद के माध्यम से युवा वर्ग को जागरूक बनाना इसका मुख्य लक्ष्य है। इसके लिए समूह चर्चा, गोष्ठियां, नाट्य समूह, फिल्म क्लब, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि विभिन्न गतिविधियां चलायी जाती हैं।

छः वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए 'बचपन' कार्यक्रम भी चलाया जाता है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए उचित वातावरण देना और उन्हें औपचारिक शिक्षा के लिए तैयार करना है।

इस कार्यक्रम के असर तथा इसे और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए आईएसएसटी 'बचपन कार्यक्रम' पर एक अध्ययन कर रहा है। इस अध्ययन में इन बच्चों के केंद्र में आने से माताओं को रोजगार और घर के काम में कितना समय मिलता है, या कितनी सुविधा होती है आदि बातों की जानकारी ली जाएगी। सर्वे का काम पूरा हो गया है। अप्रैल २०१० तक अध्ययन के पूरा होने की आशा है।

सामाजिक सुविधा संगम

दिल्ली सरकार की नई पहल है – जेंडर रिसोर्स सेंटर–सुविधा केंद्र। इसका मुख्य उद्देश्य है समाज के सबसे उपेक्षित वर्ग, खासकर, महिलाओं के जीवन को सुधारना। काम की तलाश में बाहरी आबादी का आगमन, झुग्गी–झोपड़ियों और पुर्नवसित कालोनियों का विस्तार, लड़कियों के लिंग अनुपात में गिरावट, काम में महिलाओं की भागीदारी में कमी, महिलाओं के साथ होने वाले अत्याचार और हिंसा में वृद्धि, महिला में खून की कमी के साथ ही प्रजनन स्वास्थ्य, टीबी, कुपोषण आदि समस्याओं से निपटने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं के सहयोग से काम करना शुरू किया है।

परस्पर सहयोग और भागीदारी से चलने वाली इस योजना में विभिन्न सरकारी विभागों का भी सहयोग है। अपने उद्देश्य को प्राप्त करने और योजना के क्रियान्वयन के लिए जेंडर रिसोर्स सेंटर–सामाजिक सुविधा केंद्र नाम से क्षेत्रीय स्तर के संगठनों की स्थापना की गई है। महिलाओं को जागरूक बनाने के लिए ये सुविधा केंद्र पूरी संवेदना और सहयोग के साथ काम करें यह जरूरी है।

इस योजना के क्रियान्वयन के लिए आईएसएसटी ने पूर्वी दिल्ली के कल्याणपुरी, खिचड़ीपुर और मयूर विहार फेज़ २ को अपना कार्य क्षेत्र बनाया है।

सुविधा केंद्र में दो वोकेशनल कोर्स –कटिंग,सिलाई और ब्यूटी पार्लर तो चल ही रहे हैं। इसके साथ ही हर माह हैल्थ, न्यट्रीशन कैंप भी आयोजित किए जाते हैं। महिलाओं के स्वयं सहायता समूह भी बनाए गए हैं।

१३ जनवरी २०१० को पूर्वी दिल्ली के सांसद श्री संदीप दीक्षित ने कल्याणपुरी स्थित आईएसएसटी जेंडर रिसोर्स सेंटर–सुविधा केंद्र का उद्घाटन किया।

आईएसएसटी कम्युनिटी कॉलेज

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इगनू) द्वारा शुरू की गई वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था की एक नई पहल है – आईएसएसटी कम्युनिटी कॉलेज।

इसके अंतर्गत दो पाठ्यक्रमों की शुरुआत की गई है। फंक्शनल इंग्लिश और कम्प्यूटर की बुनियादी जानकारी। दोनों ही पाठ्यक्रमों की अवधि छः माह है।

जनवरी २०१० में आईएसएसटी कम्युनिटी कॉलेज में फंक्शनल इंग्लिश के अलावा कम्प्यूटर प्रशिक्षण के पहले सत्र की भी शुरुआत हुई। फंक्शनल इंग्लिश सर्टिफिकिट कोर्स के इस सत्र में कुल ४८ छात्र–छात्राओं ने प्रवेश लिया। सुविधा, समय और संसाधनों को देखते हुए इन विद्यार्थियों को तीन समूहों में बांटा गया है। इनकी कक्षायें सुबह ९ से १०:३०, दोपहर १:३० से ३ और ३ से ४:३० तक चलती हैं। इन तीनों कक्षाओं में क्रमशः ११, १९ और १८ छात्र – छात्राएं हैं।

वर्कशॉप : उत्तराखंड महिला परिषद

२९ मार्च २०१० को आईएसएसटी ने इंडिया हैबिटेट सेंटर के सभागार में एक विचार गोष्ठी का आयोजन किया। आईएसएसटी द्वारा उत्तराखंड महिला परिषद् के कार्यानुभवों पर किये गए शोधकार्य पर यह कार्यशाला आधारित थी। चर्चा का मुख्य केंद्र बिंदु था – विकास और जन–भागीदारी में स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका। प्रतिभागियों ने सरकारी गतिविधियों के साथ स्वैच्छिक संस्थाओं के समन्वयन के मुद्दे पर भी विस्तार से चर्चा की ।

इस अध्ययन और कार्यशाला के लिए राजेश्वर सुशीला दयाल चैरिटेबल ट्रस्ट से सहयोग मिला।

जेंडर पॉलिसी फोरम

जेंडर पॉलिसी फोरम श्रृंखला की १८वीं बैठक का विषय था – स्ट्रक्चर्ड इनइक्वेलिटीज़ : फैक्टर्स एसोसिएटेड विथ स्पेशल डिस्पेरिटीज़ इन मैटरनिटी केयर इन इंडिया। इंस्टीटयूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट और इंडिया हैबिटेट सेंटर ने संयुक्त रूप से इस बैठक का आयोजन किया। यह बैठक इंडिया हैबिटेट सेंटर के कैजुरीना सभागार में ५ मार्च २०१० को हुई। प्रमुख वक्ता थीं – सीनियर फैलो एनसीएईआर और सोशियालॉजी युनिवर्सिटी ऑफ मैरीलेंड, यूएसए की डॉक्टर सोनालडे देसाई।

आई.एस.एस.टी., अपर ग्राउंड फ्लोर, कोर ६–ए, इंडिया हैबिटेट सैंटर, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003 द्वारा प्रकाशित। संयोजन : मंजुश्री मिश्र। साज–सज्जा :मो. नसीम आरिफ। ई–मेल : isstdel@isst-india.org
वेबसाइट: www.isst-india.org फोन : 91-11-47682222

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट समाचार पत्रिका

वर्ष 17, अंक 2
अप्रैल से जून 2010

कामयाबी के मामले में महिला सांसद आगे

देश की तकदीर बदल सकती हैं महिलाएं
संजय वर्मा

यू. एन. का नया संगठन : महिलाओं के पक्ष में

फेल होते स्कूल

केवल निजी वितरण के लिए

यह अंक

8 मार्च 2010, अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की सौवीं वर्षगांठ पर भारतीय महिलाओं को बड़ी उम्मीद थी एक बड़े उपहार की – महिला आरक्षण बिल की स्वीकृति के रूप में। लेकिन कुछ नेताओं के विरोध के कारण एक बार फिर यह बिल अटक गया। जहां 14 साल इंतज़ार किया, वहां एक दिन और सही। आखिर 9 मार्च 2010 को यह शुभ घड़ी आ गई। 108वां संविधान संशोधन बिल राज्यसभा में एक को छोड़ पूरे सदन के भारी बहुमत से पास हो गया।

इस अंक में प्रस्तुत है एक अध्ययन के ऐसे आंकड़े, जो राजनैतिक क्षेत्र में शिक्षा, कामयाबी आदि हर स्तर पर महिला सांसदों को पुरुष सांसदों से आगे पाते हैं। इसके साथ ही इस बिल के श्री गणेश से लेकर बिल के लंबे सफर, दुनिया के अन्य कुछ देशों में महिला आरक्षण की व्यवस्था की जानकारी भी प्रस्तुत है।

और जानकारी मिलेगी आई.एस.एस.टी. में चल रही विभिन्न गतिविधियों की।

कामयाबी के मामले में महिला सांसद आगे

भारत में एक ओर जहां महिलाओं को और राजनीतिक ताकत मिलने वाली है वहीं एक स्टडी में दावा किया गया है कि महिला सांसद पुरुष सांसदों की तुलना में ज्यादा सफल और शिक्षित होती हैं। पीआरएस लेजिस्लेटिव रिसर्च द्वारा जमा किया गया डेटा बताता है कि चुनावों में महिला केंडिडेट पुरुषों की तुलना में ज्यादा कामयाब रहती हैं। कुल महिला प्रत्याशियों में से जीतने वालों की संख्या जहां 10 प्रतिशत थी वहीं पुरुषों में यह 6 प्रतिशत तक ही सीमित थी। बीजेपी और कांग्रेस दोनों द्वारा चुनाव में उतारे गए प्रत्याशियों में महिलाओं का प्रतिशत 11 था, जबकि जीतने वाले कुल प्रतिनिधियों में महिलाओं का प्रतिशत 10 था।

इसी तरह महिला सांसदों की शैक्षणिक प्रोफाइल पुरुषों से बेहतर थी। 32 प्रतिशत महिला सांसद स्नातकोत्तर या पीएचडी थीं, जबकि पुरुषों का यह प्रतिशत 30 था। 42 प्रतिशत महिला सांसदों के पास स्नातक डिग्री थी और 46 प्रतिशत पुरुष सांसद स्नातक थे। 14वीं लोकसभा में तो 30 प्रतिशत महिलाओं के पास बैचलर और 58 प्रतिशत के पास हायर डिग्री है।

उम्र में भी पुरुषों की तुलना में महिला सांसद युवा हैं। महिलाओं की औसत उम्र 47 है, जबकि पुरुषों की 54। महिला सांसदों में 70 साल से ऊपर की कोई सांसद नहीं हैं पर संसद के 7 प्रतिशत पुरुष सदस्य 70 साल से अधिक हैं। राज्यों के मामले में देखें तो मध्य प्रदेश में सबसे ज्यादा महिला सांसद (21 प्रतिशत) हैं। इसके बाद पश्चिम बंगाल (17 प्रतिशत) और उत्तर प्रदेश (15 प्रतिशत) है। इसी तरह बड़ी राजनीतिक पार्टियों में तृणमूल कांग्रेस ने सबसे ज्यादा महिला प्रत्याशियों को चुनाव में उतारा।

एनबीटी से साभार

महिला आरक्षण बिल : विरोध की वजह

संसद के बाहर और भीतर, दोनों ही जगह महिला आरक्षण बिल का इतना जबर्दस्त विरोध क्यों हो रहा है, इसे समझना बड़ा आसान है। इसके पीछे मुख्य तौर पर पुरुष नेताओं का डर है। जैसे ही एक बार संसद और विधानसभाओं की एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए रिज़र्व हो जाएंगी, राजनीति में पुरुषों का वर्चस्व एकदम से कम हो जाएगा।

फिलहाल लोकसभा में 543 सीटें हैं। इनमें से 122 सीटें पहले से ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित हैं। इससे सामान्य सीटों के उम्मीदवारों के लिए 421 सीटें बचती हैं। अगर ऐसे में 181 सीटें और महिलाओं के लिए(141 खुली और 40एससी/एसटी के लिए)आरक्षित कर दी जाती हैं, तो पुरुष राजनीतिज्ञों के लिए लोकसभा की केवल 282 सीटें बच जायेंगी। इन 282 खुली सीटों पर भी महिलाएं अलग से चाहें, तो चुनाव लड़कर जीत सकती हैं। एससी/एसटी के लिए रिज़र्व सीटों में से पुरुषों के लिए 82 सीटें उपलब्ध होंगी।

ऐसे में यह अंदाजा लगाना आसान है कि रूढ़िवादी सोच वाले पुरुषों के लिए इसे पचा पाना आसान नहीं है, खासकर तब जबकि लंबे समय से राजनीति को पुरुषों का अधिकार क्षेत्र और फायदेमंद करियर वाली जगह माना जाता है। सिर्फ लोकसभा में ही नहीं, बल्कि यह बिल राज्यों की विधानसभाओं में भी पुरुष वर्चस्व को कम कर देगा। इस समय सभी विधानसभाओ को मिलाकर कुल 4,109 सीटें हैं, जिनमें से 1167 एससी/एसटी के लिए रिज़र्व हैं। महिला आरक्षण बिल पास होने पर इनमें से 1370 सीटें महिलाओं के पास चली जायेंगी।

सुबोध वर्मा, टाइम्स इनसाइट ग्रुप

महिला आरक्षण बिल की शुरुआत

संसद में महिला आरक्षण बिल के वैसे तो कई समर्थक रहे हैं, पर बिल के लिए बनी संयुक्त संसदीय समिति की अध्यक्षा और सीपीआई नेता गीता मुखर्जी इस बिल की सबसे बड़ी समर्थक थीं। वैसे तो उन्होंने कई मुद्दों पर आवाज़ उठाई थी पर 1996 के बाद से महिला आरक्षण बिल को लेकर वे विशेष कोशिश करती रहीं। इस बिल के प्रति उनका इतना अधिक समर्पण था कि बिल पर पूरी तरह ध्यान केंद्रित करने के लिए उन्होंने गुजराल सरकार में मंत्री पद भी ठुकरा दिया। उनकी नीति महिला बिल पर सभी को साथ लेकर चलने की रही है। 1924 में जन्मी गीता मुखर्जी महिला आरक्षण बिल पास होने के सपने के साथ सन् 2000 में इस संसार से बिदा हो गईं।

एनबीटी से साभार

बांग्ला–पाक में पहले से है कोटा

दुनिया के कुछ देशों में महिला आरक्षण की व्यवस्था संविधान में दी गई है या विधेयक के जरिए यह प्रावधान किया गया है। जबकि कुछ में राजनीतिक दलों के स्तर पर ही इसे लागू कर दिया गया है।

कानून बनाकर आरक्षण देने वाले देश :

बांग्लादेश : 330 में से 30 सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित।

पाकिस्तान : कुल सीटों का 30 प्रतिशत कोटा।

अफगानिस्तान : कुल सीटों का 27 प्रतिशत से ज्यादा रिज़र्व।

युगांडा : सभी 39 जिलों में से हर एक से एक–एक संसदीय सीट महिलाओं के लिए आरक्षित।

अर्जेंटीना : महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत कोटा।

भारत : 74वें संविधान संशोधन के जरिए स्थानीय नगर निकायों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण।

इरीट्रिया : 105 सीटों में से 10 सीटें आरक्षित।

तंजानिया : 255 में से 15 सीटें आरक्षित।

राजनीतिक दलों के जरिए महिला आरक्षण :

स्कैंडिनेवियाई देशों डेनमार्क, नॉर्वे और स्वीडन में राजनीति में महिलाओं का अच्छा प्रतिनिधित्त्व है। स्वीडन की संसद में कुल सीटों का 40 प्रतिशत, फिनलैंड में 34 प्रतिशत, नॉर्वे में 38 प्रतिशत, डेनमार्क में 34 प्रतिशत और आइसलैंड में 25 प्रतिशत है। स्कैंडिनेविया में महिला कोटे जैसी कोई व्यवस्था संविधान या कानून में नहीं है। यहां ज्यादा प्रतिनिधित्त्व की वजह दलों में महिला समूहों का दबाव और महिला आंदोलन हैं। कई दलों ने भी महिलाओं के लिए आरक्षण किया है, जैसे :

1983 में नॉर्वे की लेबर पार्टी ने फैसला किया कि सभी चुनावों में स्त्री–पुरुषों का प्रतिनितधत्त्व कम से कम 40 प्रतिशत हो।

1988 में दानिश सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी ने स्थानीय और क्षेत्रीय चुनावों में स्त्री–पुरुष दोनों के लिए कम से कम 40 प्रतिशत प्रतिनिधित्त्व की बात कही।

1994 में स्वीडिश सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी ने तो कैंडिडेट लिस्ट में हर दूसरा स्थान महिला को देने का सिद्धांत चलाया। यानी पहला प्रत्याशी पुरुष है तो अगली प्रत्याशी महिला होगी, फिर अगला पुरुष और फिर महिला।

एनबीटी से साभार

बिल का सफर

1992 : स्थानीय निकायों महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण।

1996 : देवगौड़ा की युनाइटेड फ्रंट सरकार ने विधायिका में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का बिल पास किया।

सितंबर, 1996 : लोकसभा में पहली बार बिल पेश, संयुक्त संसदीय समिति के पास भेजा गया।

दिसंबर, 1996 : समिति ने रिपोर्ट जमा की पर युनाइटेड फ्रंट सरकार गिरने से बिल भी लटक गया।

जून, 1998 : एनडीए सरकार ने 12वीं लोकसभा में बिल दोबारा पेश किया, पर सरकार के साथ बिल भी गिर गया।

नवंबर, 1999 : बिल दोबारा पेश, एसपी ने विरोध किया, कांग्रेस व लेफ्ट ने सपोर्ट का भरोसा दिया।

2000 : बिल को सर्वसम्मति नहीं मिली, चुनाव आयोग ने सभी दलों को चुनावों में महिला उम्मीदवारों का कोटा जरूरी बनाने का सुझाव दिया।

जून, 2003 : लोकसभा में बिल पेश किए जाने से रोका गया।

मई, 2004 : यूपीए के न्यूनतम साझा कार्यक्रम में शामिल महिला आरक्षण का, यूपीए सहयोगी लालू प्रसाद ने सख्त विरोध किया।

मई, 2008 : मनमोहन सरकार ने राज्य सभा में नए सिरे से बिल पेश किया। इससे बिल के खारिज होने की आशंका घट गई। बिल संसदीय समिति के पास।

दिसंबर, 2009 : एसपी, आरजेडी और जेडीयू के विरोध के बावजूद स्थायी समिति ने रिपोर्ट पेश की। इसमें बिल को मौजूदा स्थिति में पास कराने का प्रस्ताव था।

फरवरी, 2010 : कैबिनेट ने मौजूदा स्वरूप में बिल पेश करने की मंजूरी दी।

5 मार्च, 2010 : नीतीश कुमार ने बिल को सपोर्ट देने का भरोसा दिया, ओबीसी लीडरशिप में दरार, शरद यादव अलग–थलग पड़े।

8 मार्च, 2010 : एसपी, आरजेडी, एलजेपी के विरोध के बीच बिल राज्य सभा में पेश। सरकार ने वोटिंग टाली।

9 मार्च, 2010 : भारी हंगामे के बीच महिला आरक्षण बिल पर बहस और वोटिंग। बिल राज्य सभा में 186–1 से पास।

एनबीटी से साभार

देश की तकदीर बदल सकती हैं महिलाएं

संजय वर्मा

पिछले दिनों कुवैत में 'ईव टैक्सी' के नाम से एक टैक्सी सेवा शुरू की गई है। खासकर, महिलाओं को उनके कार्यस्थल पर लाने ले जाने के लिए। इन टैक्सियों का रंग गुलाबी है। इससे कामकाजी महिलाओं को ज्यादा सहूलियत होगी। एक मुस्लिम देश में आए इस बदलाव से पता चलता है कि दुनिया में कामकाजी महिलाओं के प्रति नजरिए में अंतर आ रहा है।

पिछले दिनों अमेरिका की कुल वर्क फोर्स में महिलाओं की भागीदारी पचास प्रतिशत तक पहुंच गई। यानी अब वहां हर तरह के कामकाज में महिलाओं की संख्या पुरुषों जितनी है। यूरोपीय और अमेरिकी युनिवर्सिटियों से डिग्री लेकर निकलने वाली महिलाओं का प्रतिशत 60 तक हो गया है। नौकरी और बिजनेस में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी एक बड़े सामाजिक बदलाव का संकेत है। अब से कुछ ही दशक पहले तक भारत जैसे देशों में तो महिलाएं घर के चूल्हे–चौके तक ही सीमित थीं। विदेशों में भी उन्हें पुरुषों की तुलना में निचले दर्जे का काम और कम वेतन मिलता था। लेकिन अब महिलायें उन कंपनियों को भी सफलतापूर्वक चला रही हैं, जिनमें कभी उनकी हैसियत दोयम दर्जे की हुआ करती थी। जैसे अमेरिका की पेप्सिको फ्रांस की अरेवा और भारत में आईसीआईसीआई जैसे प्रतिष्ठान। महिलाओं ने अपनी कार्यक्षमता के बल पर यह धारणा भी गलत साबित कर दी है कि वे अत्यधिक कुशलता की मांग करने वाले और बेहद जटिल समझे जाने वाले दिमागी कामों के उपयुक्त नहीं होतीं। फ्रांस की अरेवा कंपनी का कामकाज न्यूक्लियर एनर्जी से संबंधित है, जो एंग्लो–अमेरिकन कंपनी खदानों से जुड़ी हुई है। आर्चर डेनियल्स मिडलैंड एग्रोबिजनेस संभालती है, ड्युपॉन्ट का संबंध रसायनों से है। इसी तरह सुनोको तेल कंपनी है और कंपनी जेरॉक्स का क्षेत्र टेक्नॉलजी है। इन सभी कंपनियों में महिला अधिकारी शीर्ष पदों पर हैं।

लेकिन जहां–जहां ये बदलाव हुए, वहां वे न तो स्वतःस्फूर्त हैं और न ही वे अचानक हुए। इनके पीछे अकेले महिला आंदोलनों की भूमिका भी नहीं है। बल्कि इसका ज्यादा संबंध पूरे माहौल को बदल डालने वाली सामाजिक जागृति से है। इस जागृति का ही असर है कि घर से बाहर पांव रखने वाली महिलाओं के लिए कामकाज का माहौल भी बनाया जाने लगा है। इसका उदाहरण जर्मनी और स्वीडन जैसे देश हैं, जहां की करीब 90 प्रतिशत कंपनियों ने अपने कर्मचारियों को घर से काम करने की सुविधा प्रदान की है। वहां ऐसी फर्मों की संख्या तेजी से बढ़ रही है, जो अपने कर्मचारियों को साप्ताहिक आधार के बदले वार्षिक आधार चुनने की सुविधा दे रही हैं। महिला कर्मचारियों को अपने जीवनसाथी के साथ दफ्तर आने या घर और दफ्तर में तालमेल बिठाने वाला समय चुनने की सुविधा दी गई है। कई अन्य कंपनियों जैसे : सन माइक्रोसिस्टम, मिसाइल बनाने वाली कंपनी रेथॉन और बर्कले आदि ने महिला कर्मचारियों को दफ्तरी समय और छुट्टी के मामले में उनकी जरूरतों के हिसाब से अपनी नीतियों को बेहद लचीला बनाया है। इससे महिला कर्मचारियों पर यह दबाव नहीं है कि अगर वे कार्यालय आने–जाने या काम के निश्चित घंटों के साथ तालमेल नहीं बिठा सकती हैं, तो उन्हें नौकरी छोड़कर घर बैठना होगा।

लेकिन महिलाओं के लिए सिर्फ दफ्तरी कामकाज में सुविधा मिलना ही पर्याप्त नहीं है। विदेशों में भी महिलाओं को अपने घर–परिवार की जिम्मेदारियां कमोबेश उसी रूप में उठानी पड़ती हैं, जैसे कि अपने देश में। वहां का समाज और सरकारें इस बारे में सजगता का परिचय दे रही हैं। जर्मनी में 1600 स्कूलों में बच्चों की छुट्टी लगभग उसी वक्त होती है, जब दफ्तर बंद होते हैं। इससे माताएं दफ्तर छूटने के बाद अपने बच्चों को स्कूल से अपने साथ लेकर घर आ सकती हैं। अमेरिका में कुछ प्रसिद्ध स्कूलों ने यह एडजस्टमेंट करने के साथ–साथ गर्मियों की छुट्टियों की अवधि घटा दी है।

हमारे देश में भी कई साफ्टवेयर कंपनियों ने महिला कर्मचारियों की जरूरतों के हिसाब से अपनी नीतियों में परिवर्तन किया है, जिसके अच्छे नतीजे मिले हैं। टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज में शादी और बच्चे जैसी पारिवारिक जिम्मेदारी के कारण लंबा अवकाश लेने वाली महिलाओं के सर्विस रिकॉर्ड में कोई व्यवधान नहीं दर्शाया जाता। इसके परिणामस्वरूप टीसीएस में महिला कर्मचारियों का प्रतिशत 2006 के 24 प्रतिशत से बढ़कर अब 30 प्रतिशत हो गया है। ऐसी नीतियों की वजह से ही कंपनी जेनसर में मातृत्त्व अवकाश के बाद काम पर लौटने वाली महिलाओं का प्रतिशत पिछले तीन साल में 15 प्रतिशत से बढ़कर 89 हो गया है। वर्ष 2008 में कराए गए एक सर्वे में कंपनी विप्रो ने पाया था कि नौकरी शुरू करने के 5 से 10 साल बाद शादी और बच्चों को लेकर व्यस्तता बढ़ने की स्थिति में 70 प्रतिशत महिलाएं काम पर नहीं लौट पाती हैं।

दुनिया में एक तरफ जहां ये बदलाव हो रहे हैं, वहीं दूसरी तरफ महिलाओं को बड़े पदों पर आसीन करने में हिचक है। अमेरिका में बड़ी कंपनियों में सिर्फ दो प्रतिशत महिलाएं शीर्ष पदों पर हैं, तो ब्रिटेन में ऐसे पांच प्रतिशत पद महिलाओं को दिए गए हैं। आज भी महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन दिया जाता है। यानी अभी भी यह माना जाता है कि महिलाओं को पुरुषों के बराबर रखा गया, तो शायद इसका नकारात्मक असर कंपनी की बैलेंस शीट पर पड़ सकता है। पर विभिन्न कंपनियों में महिला कर्मचारियों की बढ़ती तादाद को अर्थव्यवस्था के फायदे–नुकसान के पलड़े पर देखने से इस नजरिए के उलटे परिणाम सामने आ सकते हैं। आर्थिक सर्वेक्षण करने वाली कंपनी गोल्डमैन सैक्स ने महिलाओं की बढ़ती तादाद के प्रभाव की गणना कर बताया है कि महिलाओं को पुरुष कर्मचारियों के बराबर लाने पर इटली की जीडीपी 21 प्रतिशत, स्पेन की जीडीपी 19 प्रतिशत, जापान की जीडीपी 16 प्रतिशत, अमेरिका, फ्रांस और जर्मनी की जीडीपी नौ प्रतिशत और ब्रिटेन की जीडीपी आठ प्रतिशत तक बढ़ सकती है।

नवभारत टाइम्स से साभार

यू. एन. का नया संगठन : महिलाओं के पक्ष में

संयुक्त राष्ट्र (यू.एन.) ने महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए 'यूएन वूमेन' नामक संगठन बनाने का जो फैसला किया है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। वर्तमान में महिलाओं के लिए काम कर रही यूएन की चारों शाखाओं का अब इसमें विलय हो जाएगा। आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आम राय बन चुकी है कि महिलाओं की हालत में मूलभूत सुधार के बगैर डेवलपमेंट की तमाम कोशिशें अधूरी ही रहेंगी। इसीलिए स्त्रियों के लिए व्यापक स्तर पर कदम उठाने की जरूरत है। इसी को ध्यान में रखकर यूएन ने यह संगठन बनाया है। निश्चय ही यह विभिन्न देशों के उन प्रगतिशील तबकों की उपलब्धि है, जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों में हर तरह के विरोध झेलते हुए भी महिलाओं को रोजी–रोटी, स्वास्थ्य और सम्मान दिलाने के लिए आवाज उठाई। उन्हीं के दबाव में उनके देशों की सरकारों ने महिलाओं की दशा में सुधार के लिए कई स्कीमें शुरू कीं, अनेक कानून बनाए। लेकिन इन स्कीमों और कानूनों के बावजूद दुनिया में खासतौर से विकासशील देशों में औरतों की स्थिति आज भी अच्छी नहीं है। करीब दो साल पहले स्पेन में आयोजित महिलाओं के एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में 48 देशों की महिला प्रतिनिधियों ने जो बातें रखीं, उससे पता चला कि आज विश्व के विभिन्न हिस्सों में स्त्रियां न जाने कितने मोर्चों पर जूझ रही हैं। आज एशिया की महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा भोजन, स्वास्थ्य जैसी जीवन की बुनियादी सुविधाओं से तो वंचित है ही, उन्हें लगातार बढ़ती हिंसा का सामना करना पड़ रहा है। भारत, बांग्लादेश, नेपाल और पाकिस्तान की महिलाएं घरेलू हिंसा झेल रही हैं। इस पर रोकथाम के उपाय भी नहीं किए जा रहे हैं। जो कानून बने हैं उनका ढंग से पालन नहीं हो रहा है। इसके अलावा औरतें आतंकी हिंसा की शिकार हो रही हैं। दलित और आदिवासी महिलाओं की तस्करी और उनका यौन शोषण जारी है। घरेलू कामगार महिलाएं भारी तकलीफ झेल रही हैं। महिलाओं को आज भी कम मजदूरी मिलती है। इसके अलावा जिस तरह से जंगलों से आदिवासियों का हक छीना जा रहा है उससे गरीब आदिवासी महिलाओं का रोजगार छिन गया है। गरीब ही नहीं पढ़ी–लिखी संपन्न महिलाओं को भी सिर उठाकर जीने की आजादी नहीं मिल सकी है। उन्हें अब भी परिवार और समाज में दोयम दर्जा ही मिला हुआ है। सबसे बड़ी बात है कि महिलाओं के प्रति सोच अभी नहीं बदली है। पुरुष समाज यह स्वीकार करने को मानसिक तौर पर तैयार नहीं है कि जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी संभव है। पिछले दिनों अमेरिका के पीईडब्ल्यू रिसर्च सेंटर और इंटरनैशनल हेराल्ड ट्रिब्यून द्वारा 22 देशों में कराए गए सर्वेक्षण में चौंकाने वाले निष्कर्ष सामने आए हैं। इसमें शामिल ज्यादातर लोगों ने स्त्री–पुरुष समानता का समर्थन किया, लेकिन इसके साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि नौकरी और हायर एजूकेशन में पुरुषों को ज्यादा जगह दी जानी चाहिए। सर्वेक्षण में यह भी पता चला कि अमेरिका, फ्रांस और जर्मनी जैसे विकसित देशों में भी महिलाएं पुरुषों से कई मामलों में बहुत पीछे हैं। जाहिर है कि यूएन वुमन की चुनौती बहुत ज्यादा है। उम्मीद की जानी चाहिए कि यह दुनिया की औरतों के जीवन में थोड़ी रोशनी लाने का काम करेगा।

साभार, संपादकीय,नवभारत टाइम्स

फेल होते स्कूल

देश के एक तबके को भले ही यकीन हो कि भारत अगले पांच से दस वर्षों के भीतर एक नॉलेज पावर बन सकता है, लेकिन सचाई यह है कि हमारा एजुकेशन सिस्टम बुरी तरह लड़खड़ा रहा है। क्वालिटी एजुकेशन की बात तो दूर, हमारा तंत्र बच्चों को बुनियादी तालीम देने में भी नाकामयाब रहा है। शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे स्वैच्छिक संगठन 'प्रथम' की ताजा रिपोर्ट हमारी स्कूली शिक्षा की हकीकत को सामने लाती है। रिपोर्ट के अनुसार पहली क्लास के केवल 44 प्रतिशत बच्चे ही अंग्रेजी के अक्षरों को पहचान पाते हैं। बाकी तो बड़े–बड़े लिखे केपिटल लेटर्स भी नहीं पढ़ पाते। पढ़ाई–लिखाई की स्थिति यह है कि ग्रामीण इलाकों में पांचवीं क्लास के करीब पचास प्रतिशत बच्चे दूसरी क्लास की किताबें भी ढंग से नहीं पढ़ पाते और केवल 36 प्रतिशत बच्चे ही ढंग से गुणा–भाग कर पाते हैं। अब बच्चों का काम केवल स्कूल की पढ़ाई से नहीं चल पा रहा। मजबूरी में उन्हें ट्यूशन लेनी पड़ती है। रिपोर्ट बताती है कि सरकारी ही नहीं, प्रायवेट स्कूलों के बच्चे भी अब पहले से ज्यादा ट्यूशन ले रहे हैं। हालांकि प्रायवेट और सरकारी स्कूलों की खाई लगातार बढ़ती जा रही है और ऐसा लगता है कि सरकार ने प्रायवेट स्कूलों के आगे घुटने टेक दिए हैं। यह मान लिया गया है कि प्रायवेट स्कूल ही देश को ज्ञान की शक्ति बना देंगे। मुट्ठी भर बच्चों को ही क्वालिटी एजुकेशन उपलब्ध है, जबकि एक बड़े वर्ग को भाग्य भरोसे छोड़ दिया गया है। राज्य सरकारें बीच–बीच में राजनीतिक हित को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम में नए–नए अध्याय जोड़ने की बात जरूर करती हैं, पर उन्हें इस बात की ज्यादा फिक्र नहीं होती कि उनके सभी स्कूलों की छतें हैं या नहीं, पढ़ाने के लिए योग्य शिक्षक हैं या नहीं और बच्चे नियमित आते हैं या नहीं। जहां भोजन, बिजली, पानी और सड़क के लिए ही मारामारी हो वहां शिक्षा का नंबर बाद में ही आता है। इसलिए यह वोट की राजनीति से नहीं जुड़ पाती। जब गांवों में बच्चे पढ़ने के लिए नहीं, मिड–डे मील के लिए स्कूल जाते हों, वहां क्वालिटी एजुकेशन की बात कैसे हो सकती है। आज बहुत–से स्कूल ऐसे हैं, जहां शिक्षकों का सारा समय बच्चों के लिए दोपहर के भोजन के इंतजाम में बीत जाता है। शिक्षा के क्षेत्र में इंफ्रास्ट्रक्चर के विकास की गति बेहद धीमी है। शिक्षा को नौकरशाही के भरोसे छोड़ दिया गया है। शिक्षा विभाग को फुरसत नहीं है कि वह बदलते वक्त के साथ शिक्षा के स्वरूप में बदलाव की बात सोचें। आवश्यतानुसार शिक्षकों की संख्या ही बढ़ाई जा रही है और उनकी नियुक्ति और प्रशिक्षण की प्रक्रिया में ही कोई बदलाव आया है। शिक्षा के क्षेत्र की अनदेखी घातक साबित हो सकती है। अगर हम विकसित देशों के साथ कदम मिलाकर चलना चाहते हैं तो एजुकेशन सिस्टम को मजबूत बनाना होगा और हर किसी को मजबूत बनाना होगा और हर किसी को समान स्तर की शिक्षा उपलब्ध करानी होगी।

साभार : संपादकीय, नवभारत टाइम्स

आई.एस.एस.टी. गतिविधियां

हिमाचल प्रदेश, केरल और राजस्थान : नरेगा में महिलाओं की भागीदारी और असर

इस अध्ययन में विभिन्न स्तरों में महिलाओं की भागीदारी, बड़े पैमाने पर कार्यक्रम का असर और स्थानीय संदर्भ में दिखने वाले विभिन्न प्रभावों के कारणों को जानने की कोशिश की गई है। अध्ययन तो पूरा हो गया है। पब्लिकेशंस और वर्कशॉप के माध्यम से प्रचार–प्रसार का काम अक्टूबर 2010 तक चलेगा। यह अध्ययन सोशल प्रोटेक्शन इन एशिया (एसपीए) कार्यक्रम, फोर्ड फाउंडेशन और आई डी आर सी की सहयोग से किया गया।

डिज़िटल लायब्रेरी

इन दिनों आईएसएसटी में अपनी डिज़िटल लायब्रेरी बनाने का काम चल रहा है। इस डिज़िटल कोष में आईएसएसटी की रिसर्च रिपोर्ट, वार्षिक रिपोर्ट, मोनोग्राफ्स, वर्किंग पेपर्स, डेटा और फोटोग्राफ्स संकलित किए जाएंगे। अगले चरण में इस डिज़िटल कोष को आईएसएसटी वेबसाइट से जोड़ा जाएगा। इंटरनेट के माध्यम से हमारे पाठक आईएसएसटी की लायब्रेरी तक पहुंच सकते हैं।

बचपन कार्यक्रम : एक अध्ययन

आईएसएसटी द्वारा पूर्वी दिल्ली के कल्याणपुरी इलाके में 6 वर्ष से कम आयु वाले बच्चों के लिए बचपन कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य इन बच्चों के समग्र विकास के लिए अनौपचारिक शिक्षा आदि माध्यम से उचित वातावरण देकर औपचारिक शिक्षा के लिए तैयार करना है।

बचपन कार्यक्रम पर किए गए अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बच्चों के केंद्र में आने से माताओं के रोजगार, घर के काम पर क्या असर हुआ है आदि बातों को समझना था, ताकि इस कार्यक्रम को और अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके।

घरखाता कामगारों की स्थिति पर पेपर

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट घरखाता कामगारों की स्थिति पर एक पेपर तैयार कर रहा है। इस परचे में हमारे देश के घरखाता कामगारों की जानकारी के साथ ही दक्षिण एशिया के कामगारों की जानकारी भी रहेगी। इसका मुख्य उद्देश्य इन कामगारों के बारे में जानकारी फैलाना है। इस परचे में घरखाता कामगारों की संख्या; देश की अर्थव्यवस्था में उनका योगदान; जेंडर, रोज़गार स्टेटस, काम की स्थिति आदि; आर्थिक व्यवस्था के साथ संबंध; मजबूरी और ज़रूरतें, नीति आदि वर्तमान साक्ष्यों की समीक्षा की जाएगी।

वीमेन इन इनफॉर्मल एम्प्लॉयमेंट ग्लोबलाइज़िंग एंड ऑर्गनाइज़िंग(वीगो) के सहयोग से यह काम किया जा रहा है।

जेंडर एंड पार्टिसिपेटरी डेवलपमेंट : इवेल्यूएशन कन्सर्न

आई.एस.एस.टी., इंटरनेशनल डेवलपमेंट रिसर्च सेंटर के आर्थिक सहयोग से उपरोक्त विषय पर एक अध्ययन कर रहा है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार पर आधारित वर्कशॉप का आयोजन करना है।

26–27 अगस्त 2010 को यह वर्कशॉप होगी। इस वर्कशॉप में महिलाओं पर किए जा रहे अध्ययनों को पारदर्शी और जेंडर संवेदनशील बनाने के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार पर चर्चा की जाएगी। मूल्यांकन अध्ययनों के अनुभवों पर आधारित कुछ पेपर भी तैयार किए गए हैं। वर्कशॉप में इन परचों पर चर्चा की जाएगी।

सेवा एकेडमी : विभिन्न गतिविधियों के असर का मूल्यांकन

सेवा एकेडमी में प्रॉस्विल के सहयोग से चल रही विभिन्न गतिविधियों के प्रभाव को जानने के लिए मूल्यांकन का काम आई.एस.एस.टी. को सौंपा गया है। इसमें आई.एस.एस.टी. की भूमिका मूल्यांकनकर्ता के अलावा सलाहकार की भी होगी।

सबके लिए शिक्षा : प्रचार–प्रसार

हाल ही में आई.एस.एस.टी. में सबके लिए शिक्षा विषय पर अध्ययन हुआ है। अब अगले डेढ़ वर्ष में अध्ययन से निकले निष्कर्षों की प्रचार–प्रसार की योजना है।

निष्कर्षों के प्रचार–प्रसार के लिए विभिन्न राज्यों में राज्य स्तरीय गोष्ठियां आयोजित की जाएंगी। इन गोष्ठियों में अध्ययन के निष्कर्षों पर चर्चा होगी। तथ्यों के विश्लेषण के लिए एक–दो छात्रवृत्तियां भी दी जायेंगी। यह अध्ययन आई.डी.आर.सी. के सहयोग से किया जा रहा है।

बस्ती विकास केंद्र

सन् 2000 में आईएसएसटी द्वारा पूर्वी दिल्ली में बस्ती विकास के लिए शुरू किए गए कामों का लगातार विस्तार हुआ है। जानकारी, शिक्षा और संवाद के माध्यम से युवा वर्ग को जागरूक बनाना इसका मुख्य लक्ष्य है। इसके लिए समूह चर्चा, गोष्ठियां, नाट्य समूह, फिल्म क्लब, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि विभिन्न गतिविधियां चलायी जाती हैं।

छः वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए 'बचपन' कार्यक्रम भी चलाया जाता है। इस कार्यक्रम के लिए भारतीय प्रतिष्ठान (एनएफआई) से सहयोग मिला है।

आई.एस.एस.टी. कम्युनिटी कॉलेज

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इगनू) द्वारा शुरू की गई वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था की एक नई पहल है – आई.एस.एस.टी. कम्युनिटी कॉलेज।

इसके अंतर्गत दो पाठ्यक्रमों की शुरुआत की गई है। फंक्शनल इंग्लिश और कम्प्यूटर की बुनियादी जानकारी। दोनों ही पाठ्यक्रमों की अवधि छः माह है। पाठ्यक्रमों के सफलतापूर्वक समापन पर इगनू द्वारा प्रमाणपत्र दिए जायेंगे।

जून 2010 में इन पाठ्यक्रमों की पहली परीक्षा हुई। इसमें फंक्शनल इंग्लिश के पहले दो छात्र समूह और कम्प्यूटर प्रशिक्षण के पहले छात्र समूह ने हिस्सा लिया। फंक्शनल इंग्लिश में 48 और कम्प्यूटर साक्षरता कार्यक्रम में 39 छात्र–छात्राओं ने परीक्षा दी।

सामाजिक सुविधा संगम

अक्टूबर 2010 से आई.एस.एस.टी. द्वारा दिल्ली सरकार के सहयोग से चलाया जाने वाला –जेंडर रिसोर्स सेंटर–सुविधा केंद्र का संचालन सफलतापूर्वक हो रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य है समाज के सबसे उपेक्षित वर्ग, खासकर, महिलाओं के जीवन को सुधारना।

इस योजना के क्रियान्वयन के लिए आईएसएसटी ने पूर्वी दिल्ली के कल्याणपुरी, खिचड़ीपुर और मयूर विहार फेज़ 2 को अपना कार्य क्षेत्र बनाया है।

हैल्प डैस्क, कम्युनिटी मीटिंग के माध्यम से सरकारी कल्याणकारी, आर्थिक सहायता योजनाओं और जीआरसी–एसके की विभिन्न सेवाओं की जानकारी दी गई। स्वास्थ्य कैंप में आयरन और फ्लोरिक एसिड की गोलियां वितरित की गईं। ज्यादातर लोगों ने बदन दर्द, कमजोरी, कफ की शिकायत की। अन्य बीमारी पाने पर कुछ लाभार्थियों को अस्पताल में दिखाने की भी सलाह दी गई।

बच्चों, डायरिया और हैजा के लिए कैंप आयोजित किए गये। बढ़ती उम्र के बच्चों के पौष्टिक आहार के लिए बाजार के डिब्बा बंद भोजन के बजाय घर में ही अनाजों से किस तरह पौष्टिक आहार बनाया जा सकता है, जानकारी दी। इसी तरह डायरिया और हैजा के रोगियों के लिए साबुत अनाज की खिचड़ी और फलों के रायते की विधि बताई।

इसके अलावा जीआरसी–एसके में प्रौढ़ शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, काउंसलिंग, स्वयं सहायता समूह आदि गातिविधियां भी अपनी गति पकड़ रही हैं।

आई.एस.एस.टी.,
अपर ग्राउंड फ्लोर, कोर 6–ए,
इंडिया हैबिटेट सैंटर, लोधी रोड,
नई दिल्ली – 110 003 द्वारा प्रकाशित
संयोजन : मंजुश्री मिश्र
साज–सज्जा : दीपा मेहरा
ई–मेल : isstdel@isst-india.org
वेबसाइट : www.isst-india.org
फोन : 91-11-47682222, 47682234

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट समाचार पत्रिका

वर्ष 17, अंक 3

जुलाई–सितंबर 2010

हर बच्चे को स्कूल तक लाना इतना आसान भी नहीं
रमाकांत राय

घर का काम

ललितपुर : स्वास्थ्य पहल से मिला भाग्यशाली का दर्जा
हिमांशी धवन

सूदखोरी का नया अड्डा : मायक्रोक्रेडिट योजनायें

केवल निजी वितरण के लिए

यह अंक

सन् 1965 से हर वर्ष आठ सितंबर को पूरी दुनिया में अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस मनाया जाता है। इस दिन स्कूलों में तरह–तरह के कार्यक्रम होते हैं। सरकार साक्षरता के आंकड़े पेश करती है। यह रस्म निभाते हुए 45 वर्ष हो गए, लेकिन आज भी कम से कम हमारे देश में तो साक्षरता के पक्के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। ऐसी स्थिति में वर्ष 2000 में डकार सम्मेलन में लिया हुआ संकल्प 2015 तक पूरी दुनिया में संपूर्ण साक्षरता और लैंगिक असमानता मिटाने का लक्ष्य कैसे पूरा होगा। हमारे देश में अलग अलग वर्ग जैसे बाल मजदूर, बीच में स्कूल छोड़ देने वाले बच्चों आदि को स्कूल भिजवाने की जिम्मेदारी भी अलग–अलग मंत्रालयों की है। अतः सबको समान शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए पहले विभिन्न विभागों और मंत्रालयों में आपसी तालमेल की जरूरत है। प्रस्तुत हैं इस विषय पर रमाकांत राय के विचार।

पिछले दिनों सुप्रीम कोर्ट ने घरेलू महिलाओं के काम को अनुत्पादक मानने पर आपत्ति व्यक्त की है। 2001 की जनगणना में खाना बनाना, बच्चों की देखभाल जैसे घरेलू काम को गैर–श्रमिक वर्ग में शामिल करने और उनकी तुलना भिखारियों, वैश्याओं जैसे अनुत्पादक वर्ग से करने को पूरी तरह गलत बताया है। कोर्ट ने यह भी कहा है कि इस संबंध में संसद को कानूनों में संशोधन करना चाहिए।

प्रस्तुत है इस संबंध में नवभारत टाइम्स का संपादकीय।

इसके अलावा पिछले तीन माह में आईएसएसटी में चल रहे विभिन्न कामों की जानकारी भी मिलेगी।

हर बच्चे को स्कूल तक लाना इतना आसान भी नहीं

रमाकांत राय

आठ सितंबर को पूरी दुनिया में अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस मनाया जाता है। यह परंपरा 1965 में शुरू हुई। इस दिन सरकार साक्षरता के आंकड़े पेश करती है। स्कूलों में बच्चे तथा अध्यापक वाद–विवाद, लेख तथा भाषण प्रतियोगिताएं आयोजित कर साक्षरता के महत्त्व पर प्रकाश डालते हैं। स्कूल के बच्चे इस आयोजन में बढ़–चढ़कर भाग लेते हैं। दुर्भाग्य से ऐसा अवसर भारत में हर बच्चे को नहीं मिलता। क्योंकि देश में करोड़ों बच्चे (एक मोटे अनुमान के अनुसार लगभग 6 करोड़) अब भी स्कूल से बाहर हैं। उनके जीवन में शिक्षक दिवस, साक्षरता दिवस या स्कूल का कोई मतलब नहीं है। यूनेस्को के अनुसार आज पूरी दुनिया में हर पांचवां व्यक्ति निरक्षर है, जिसमें दो तिहाई महिलाएं हैं। वर्ष 2000 में डकार में 182 देशों ने मिलकर संकल्प लिया था कि वर्ष 2015 तक पूरी दुनिया के बच्चे साक्षर हो जाएंगे और उनमें लैंगिक असमानता मिट जाएगी। लेकिन अनेक देशों में यह लक्ष्य हासिल होते नहीं दिख रहा है। भारत में ही दुनिया के एक तिहाई निरक्षर हैं।

साक्षरता के मामले में भारत के बच्चों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। बच्चों की बुनियादी शिक्षा के अधिकार का अधिनियम भारत में इस साल एक अप्रैल से लागू हो गया है। इसे लागू करने के लिए मध्य प्रदेश, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र में मॉडल रूल बनने शुरू भी हो गए हैं। सवाल है कि क्या शिक्षा के अधिकार का कानून भारत के सभी बच्चों को मुफ्त, अनिवार्य, समान व उपयोगी शिक्षा देने की व्यवस्था कर रहा है? भारत में लगभग 18 करोड़ बच्चे 12 लाख (प्राथमिक और उच्च प्राथमिक) स्कूलों में पढ़ रहे हैं। इन्हें 57 लाख अध्यापक पढ़ा रहे हैं। यद्यपि बच्चों की संख्या को लेकर अनिश्चय है। भारत सरकार के 'जॉइंट रिव्यू मिशन 2009' के अनुसार 4 करोड़ 60 लाख बच्चे स्कूलों से बाहर हैं और 13 करोड़ 45 लाख बच्चे स्कूलों में पढ़ रहे हैं। इसी रपट के अनुसार प्राथमिक में 29 प्रतिशत तथा उच्च प्राथमिक में 51 प्रतिशत बच्चे बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं।

यदि बाल मजदूरी के आंकड़ों को देखें तो पता चलेगा कि 2001 की जनगणना के अनुसार बच्चों का एक बड़ा हिस्सा यानी लगभग 1 करोड़ 26 लाख मजदूरी में लगा है। मगर क्या हमारे देश में इतने ही बच्चे बाल मजदूर हैं ? जनगणना तथा भारतीय नमूना सर्वेक्षण में केवल उन्हीं बच्चों को बाल मजदूर माना गया है जो किसी प्रकार की आर्थिक गतिविधि में लगे हैं। यह सर्वेक्षण असंगठित क्षेत्र के बच्चों को शामिल नहीं करता। इसी प्रकार भीख मांगना, वैश्यावृत्ति, आपराधिक गतिविधियां, बेगार तथा चोरी जैसी गतिविधियों में संलिप्त बच्चों को बाल मजदूरी में शामिल नहीं किया गया है। यदि इन सारे बच्चों को शामिल किया जाए तो बाल मजदूरों की संख्या 6 करोड़ के आसपास हो जाएगी।

इसी प्रकार की समस्या स्कूल से बाहर के बच्चों से जुड़ी है। सरकारी आंकड़ों (डाइस) के हिसाब से भारत में सिर्फ 88 लाख बच्चे स्कूलों से बाहर हैं। यह भ्रमित करने वाला आंकड़ा है। ऐसा इसीलिए है कि सरकार 'स्कूल से बाहर' सिर्फ उन्हीं बच्चों को मानती है जो या तो स्कूलों में नामांकित ही नहीं किए गए या 90 दिन से ज्यादा स्कूल से गायब रहे। 'स्कूल से बाहर' के बच्चों का आकलन करने में अलग–अलग एजेंसियों द्वारा अलग–अलग मानक अपनाए जाते हैं। जैसे : राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण या जनगणना विभाग द्वारा कभी नामांकित नहीं हुए बच्चों और 15 दिन या इससे ज्यादा दिनों तक लगातार गैरहाजिर रहने वाले बच्चों को 'स्कूल से बाहर' माना जाता है। कानूनों में अंतर्विरोध तथा विभिन्न मंत्रालयों में समन्वय की कमी भी शिक्षा अधिकार कानून के रास्ते में बड़ी बाधा है। उदाहरण के लिए बाल मजदूरों को स्कूल भिजवाने का उत्तरदायित्त्व श्रम विभाग पर है। आपराधिक प्रवृत्ति तथा पीड़ित बच्चों की सुरक्षा एवं देखभाल का दायित्त्व महिला एवं बाल विकास मंत्रालय का है। आवश्यकता है इन सभी विभागों और मंत्रालयों में आपसी समन्वय की तभी सबको समान शिक्षा उपलब्ध कराने का लक्ष्य पूरा होगा।

नवभारत टाइम्स से साभार

घर का काम

सुप्रीम कोर्ट ने हाल ही में हुए एक फैसले में गृहणियों को लेकर जो टिप्पणी की है, उससे न सिर्फ नीति–निर्माताओं की बल्कि पूरे समाज की आंखें खुल जानी चाहिए। कोर्ट ने कहा कि एक हाउस वाइफ के काम को अनुत्पादक मानना महिलाओं के प्रति भेदभाव को दर्शाता है। यह भेदभाव समाज में तो है ही सरकार के स्तर पर भी है। कोर्ट ने इस बात पर हैरानी जताई कि जनगणना तक में घरेलू महिलाओं के प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया झलकता है। 2001 की जनगणना में खाना पकाने, बर्तन साफ करने, बच्चों की देखभाल करने, पानी लाने, ईंधन एकत्र करने जैसे घरेलू काम करने वाली महिलाओं को गैर–श्रमिक वर्ग में शामिल किया गया है और उनकी तुलना भिखारियों, वेश्याओं और कैदियों जैसे अनुत्पादक समझे जाने वाले वर्ग से की गई है। इस दृष्टिकोण को पूरी तरह गलत बताते हुए अदालत ने उस रिसर्च की चर्चा की, जिसमें भारत की करीब 36 करोड़ गृहिणियों के कार्यों का वार्षिक मूल्य लगभग 612.8 अरब डॉलर आंका गया है। कोर्ट ने कहा कि संसद को कानूनों में संशोधन करना चाहिए ताकि दुर्घटना या वैवाहिक संपत्ति के बंटवारे के समय उनके कामों का वैज्ञानिक नजरिए से मूल्यांकन संभव हो सके। कोर्ट ने एक दुर्घटना में मारी गई उत्तर प्रदेश की रेणु के परिजनों को दी जाने वाली मुआवजे की राशि ढाई लाख से बढ़ाकर साढ़े छह लाख रुपये करने का आदेश देते हुए यह विस्तृत टिप्पणी की। उसने एक सामाजिक सच की ओर हमारा ध्यान खींचा है।

घरेलू काम की कीमत न आंके जाने के कारण ही स्त्रियां उपेक्षित रही हैं। हमारे पुरुष प्रधान समाज में हाउस वाइफ के कामों को दोयम दर्जे का समझा जाता है और यह माना जाता है कि यह सब तो उन्हें किसी भी हाल में करना ही है। लेकिन बदले में उन्हें अपेक्षित सम्मान और स्नेह तक नहीं मिलता। यह स्थिति उन्हें शारीरिक और मानसिक रूप से तोड़ देती है। सचाई यह है कि परिवार और समाज की नींव महिलाओं के उन कार्यों पर टिकी है, जो कहीं दर्ज नहीं होते। ग्रामीण जीवन में तो महिलाओं के योगदान के बगैर कृषि कार्य संभव ही नहीं है। शहरों में भी स्थिति अलग नहीं है। हाल के वर्षों में शिक्षित औरतों के एक बड़े वर्ग ने रोजी–रोजगार के नए–नए क्षेत्रों में प्रवेश किया है, लेकिन एक बड़ी संख्या उनकी भी है, जिन्होंने सोच–समझकर हाउस वाइफ रहना स्वीकार किया है ताकि वे घर–परिवार को पर्याप्त समय दे सकें और अपने बच्चों का भविष्य बना सकें। वे रोजमर्रा के जीवन को बेहतर बनाने के लिए जो योगदान दे रही हैं, उसका महत्त्व किसी भी रूप में कम नहीं है। यह अलग बात है कि विभिन्न उत्पादक सेक्टरों की तरह उनके काम को आंकने का कोई ठोस पैमाना हमारे पास नहीं है। सबसे पहले तो मन को इसका पैमाना बनाना होगा। अगर हम मन से उनके योगदान को महत्त्व देना शुरू कर देंगे तो कई समस्याएं अपने आप सुलझ जाएंगी।

साभार : नवभारत टाइम्स संपादकीय

ललितपुर : स्वास्थ्य पहल से मिला भाग्यशाली का दर्जा

हिमांशी धवन

देश की कुपोषण और बाल–मृत्युदर कम करने की जंग में उत्तर प्रदेश का ललितपुर जिला भाग्यशाली है। उत्तर प्रदेश का यह अज्ञात जिला, जिसकी जनसंख्या लगभग 10 लाख है की यह सफलता किसी के लिए भी ईर्ष्या का कारण बन सकती है। इसका श्रेय जाता है बेबी फ्रेंडली सामुदायिक स्वास्थ्य पहल को।

सन् 2006 से पहले ललितपुर की बाल–मृत्युदर प्रति 1000 पर 72 थी। साधारणतौर पर यहां 30,000 बच्चे प्रतिवर्ष जन्म लेते हैं। कुपोषण दर राष्ट्रीय औसत दर 46 प्रतिशत की तुलना में 42 प्रतिशत थी। तीन वर्षों में जो परिणाम सामने आए वे उत्साहवर्धक थे। इस योजना का मुख्य उद्देश्य मां–बच्चे को पौष्टिकता के बारे में जानकारी देना

था। इससे केवल बाल मृत्यु दर में ही कमी नहीं आई, बल्कि 0–6 माह के बच्चों में स्तनपान की दर भी 7 प्रतिशत से बढ़कर 50 प्रतिशत पर पहुंच गई। इसके साथ ही आयु के अनुपात में कम वज़न वाले बच्चों का प्रतिशत भी 42 से कम होकर 26 पर आ गया।

नवजात शिशु की जीवन क्षमता को बढ़ाने के लिए शुरु के 6 महीने तक केवल स्तनपान पर जोर स्तनपान के लाभ और जिले को स्थायी मॉडल के रूप में विकसित करने पर ही यह योजना केंद्रित थी।

गोरखपुर मेडिकल कॉलेज और यूनिसेफ के सहयोग से इस जिले के लगभग 600 गांव इस योजना से लाभान्वित हुए हैं। वार्षिक 42 लाख रुपए के मामूली बजट में जरूरतमंद गर्भवती महिलाओं को उनके घर में परामर्श दिया जाता था। गोरखपुर मेडिकल कॉलेज के बाल विभाग ने इस सादे और असरकारी विचार को फैलाया और क्रियान्वित किया ललितपुर और गोरखपुर जिले के सामाजिक कार्यकर्ताओं ने।

कुल मिलाकर 3,339 लोगों को प्रशिक्षित किया गया। इन लोगों ने मां और रिश्तेदारों को प्रसव से पहले की देखभाल, साफ–सफाई, शुरू के 6 माह तक नवजात शिशु को स्तनपान के फायदे, यदि मां स्तनपान कराने में असमर्थ है, तो संपूरक आहार आदि के बारे में जानकारी दी।

हरेक बस्ती मदर्स सपोर्ट समूह की पथप्रदर्शक थी। प्रोजेक्ट निदेशक और गोरखपुर मेडिकल कॉलेज के बाल विभाग के प्रमुख डॉक्टर के पी कुशवाहा ने बताया कि उत्तर प्रदेश में ललितपुर की स्थिति सबसे खराब थी इसीलिए यह जरूरी था। इस योजना से स्तनपान स्वाभाविक नैसर्गिक देन है जैसी प्रचलित गलतफहमियों को दूर करने में भी सहायता मिली। डॉक्टर कुशवाहा का कहना है कि नवजात शिशु को स्तनपान कराने के लिए मां को मजबूत सहयोगी ढांचे की जरूरत है।

गर्भवती स्त्रियों और उनके रिश्तेदारों को प्रशिक्षण देने वाले प्रशिक्षकों में लगभग 50 प्रतिशत पुरुष थे। 48 परामर्शदाताओं में 26 महिलायें और 24 पुरुष थे। स्तनपान को बढ़ावा देने वाले समूह के डॉक्टर अरुण गुप्ता का कहना है कि इस योजना में पुरुषों को केवल उनके व्यवहार में बदलाव लाने के लिए ही शामिल नहीं किया गया, बल्कि ललितपुर के अंदरूनी इलाकों में भी आसानी से पहुंचा जा सके इसलिए भी पुरुषों को योजना में शामिल किया गया।

डॉक्टर गुप्ता के अनुसार यह योजना देश के 600 जिलों में आसानी से दोहरायी जा सकती है। इसमें एक पौष्टिक आहार संबंधी जानकारी देने वाले एक परामर्शदाता की भी जरूरत है। इस योजना को अन्य जिलों में लागू करने के लिए 6–8 लाख आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं की नियुक्ति और 240 करोड़ रुपए के वार्षिक बजट की जरूरत होगी।

टाइम्स ऑफ इंडिया से साभार

सूदखोरी का नया अड्डा : माइक्रोक्रेडिट योजनायें

सुभाष गाताडे

इक्कीसवीं सदी की पहली दहाई गरीबी उन्मूलन के नाम पर शुरू माइक्रोक्रेडिट योजनाओं के नाम दर्ज होगी। बांग्लादेश के प्रो. मोहम्मद युनूस को उनकी इस योजना के लिए नोबेल पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया था। पारंपरिक बैंकों से इसकी भिन्नता को रेखांकित करते हुए बताया गया था कि पारंपरिक बैंक में जहां जिसके पास जितना अधिक है, उसे उतना अधिक मिलेगा, वहीं माइक्रोक्रेडिट का आधार है जिसके पास जितना कम होगा उसे उतनी प्राथमिकता मिलेगी। यह प्राथमिकता समूचे समूह के आधार पर, उसे गारंटीदार बनाकर प्रदान की जाती है। जैसे भारत के संदर्भ में कर्ज वितरण को सुगम बनाने के लिए जिन स्व–सहायता समूहों का निर्माण होता है, वे खुद ही इसके गारंटीदार बन जाते हैं।

बैंकों की नाकामी : माइक्रोक्रेडिट के इस सेलिब्रेशन पर सवाल उठाने वाली आवाजें पहले से मौजूद

रही हैं। उनका कहना है कि 'सफलता की तमाम कहानियों' के बावजूद इसके अंतर्गत गरीबों को दिये जाने वाले ऋण की मात्रा काफी कम रहती है और वह ज्यादातर उत्पादन के काम के लिए नहीं, बल्कि उपभोग के मद में इस्तेमाल होती है तथा इसमें ब्याज की दर 20 से 40 प्रतिशत तक रहती है और कर्जे की वसूली 98 प्रतिशत तक देखी गयी है। यह भी कहा जाता रहा है कि 'यह तमाम राजकीय और व्यावसायिक बैंकों की असफलता का ही सूचक है कि वे वास्तविक गरीब को कर्जा देने में अक्षम साबित हुए हैं और इस काम को माइक्रोक्रेडिट योजनाओं के जरिए पूरा करना पड़ रहा है।

अरबों डॉलर की कॉपार्टामोस : माइक्रोक्रेडिट योजना के विगत कुछ वर्षों के अनुभवों पर नज़र डालते हुए प्रो. मोहम्मद युनूस खुद भी गरीबी उन्मूलन के इस फार्मूले पर पुनर्विचार कर रहे हैं। पिछले दिनों संयुक्त राष्ट्रसंघ में उन्होंने साफ कहा कि हम लोगों ने माइक्रोक्रेडिट का निर्माण लोन शार्क्स यानी गिद्धनुमा महाजनों से मुक्ति के लिए किया, कुछ नए लोन शार्क्स पैदा कर देने के लिए नहीं। दरअसल इन छोटे–छोटे कर्जों के जरिए प्राप्त हो सकने वाले जबरदस्त मुनाफे से आकर्षित होकर कई बड़े–बड़े बैंक और वित्तीय संस्थान इसमें कूद गए हैं और इस क्षेत्र में आज इन्हीं का दबदबा है। आश्चर्यजनक रूप से इनमें कुछ की सालाना ब्याज दर सौ प्रतिशत है।

ब्याज की ऐसी दरों को लेकर यह बहस भी चल पड़ी है कि किस स्तर तक ब्याज और मुनाफा स्वीकार्य समझा जाना चाहिए और कहां पहुंच कर इसे शोषण कहा जाना चाहिए ? इस विवाद की तरफ अमेरिकी कांग्रेस की भी निगाह गयी है। उसकी वित्तीय सेवा कमेटी के सामने बकायदा इस मुद्दे को रखा गया था। मेक्सिको में माइक्रोक्रेडिट ब्याज दर का औसत 70 प्रतिशत है जबकि वैश्विक औसत लगभग 37 प्रतिशत है। ब्याज की भारी दर लेने वालों में मेक्सिको और नाइजीरिया दुनिया भर में अव्वल कहे जा सकते हैं। कभी स्वयंसेवी संस्था के तौर पर शुरू हुई मेक्सिको की कॉपार्टामोस का अरबों डॉलर की कंपनी में रूपांतरण दुनिया भर में चर्चा का विषय है। एक समय यह संस्था स्वयं सहायता समूहों के निर्माण या लघु वित्त योजनाओं के संचालन जैसे कामों में जुटी थी । 2007 में इसका नाम सुर्खियों में आया जब यह पता चला कि अपने इन शुरुआती प्रयासों में निहित लाभ की संभावनाओं को बहुत पहले पहचान कर उसके द्वारा निर्मित एक कंपनी ने स्टॉक मार्केट में निवेशकों से 45 करोड़ 80 लाख डॉलर इकट्ठे किए थे।

इस पृष्ठभूमि में भारत का अपना अनुभव क्या कहता है ? देश में लघु वित्त संस्थानों के विस्तार को देखते हुए उनके नियमन और निर्देशन के लिए संसद में बिल लाने का मसला लंबे समय से विचाराधीन रहा है। एक मोटे अनुमान के अनुसार आज अपने यहां लगभग 250 लघु वित्त संस्थान कार्यरत हैं और वे दो करोड़ से अधिक जरूरतमंदों तक अपनी सेवाएं पहुंचा रहे हैं। बीते साल उन्होंने 13 हजार करोड़ रुपए के कर्ज बांटे थे।

भारतीय नीति निर्माताओं में लघु वित्त योजनाओं के अंर्तगत दिए जा रहे कर्जे के सूद की दर को लेकर बहस चलती रही है। संसद के पटल पर रखे जाने के लिए प्रस्तावित माइक्रोफाइनांस बिल का मसविदा तैयार करते वक्त रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया और खुद वित्त मंत्रालय के अधिकारियों का एक हिस्सा भी यही मांग करता रहा है कि इस योजना के अंतर्गत जारी किए जा रहे कर्जे पर सूद की दर को नियंत्रित रखा जाना चाहिए। यह अलग बात है मसविदे में 'नियंत्रण' के बजाए सलाह की बात की गई है।

बाढ़ में मासिक किस्त : इस दृष्टि से आंध्र प्रदेश सबसे आगे है। यहां हजारों की संख्या में स्व–सहायता समूहों का निर्माण हुआ है। लेकिन यहीं पर हजारों किसानों ने, जिनमें महिलाएं भी शामिल हैं कर्जे से तंग आकर आत्महत्या भी की हैं। पिछले साल इस प्रांत में कुछ इलाके बाढ़ से घिर गए थे। ऐसे कई तबाह गांवों में सबसे पहले पहुंचने वाले माइक्रोक्रेडिट संस्थाओं के नुमाइंदे थे, जो बाढ़ में अपना सब कुछ खो चुकी महिलाओं से अपनी मासिक किस्तें मांग रहे थे। शेयर, माइक्रोफिन, स्पंदन, बेसिक्स और एसकेएस जैसी कई संस्थाएं – जिनका लगभग 1040 करोड़ रुपया इस काम में लगा है – अपनी भारी ब्याज दर और कर्जे की वसूली के लिए अपनाए गए जोर–जबरदस्ती के तरीकों को लेकर काफी बदनाम

हो चुकी हैं। यहां तक कि कर्जों की जबरन वसूली के लिए इनके प्रतिनिधियों द्वारा अपनाए गए तौर–तरीकों से तंग आकर कृष्णा, गुंटूर और प्रकाशम जिलों में कई आत्महत्यायें हो चुकी हैं। सेल्फ–हेल्प समूहों को कर्जा उपलब्ध कराने वाली माइक्रोफाइनांस संस्थाओं द्वारा लिए जाने वाले ब्याज की दर घटाने के लिए मजबूरन आंध्र सरकार को अपने स्तर पर दखल देना पड़ा था। ऐसे में इन संस्थाओं के कामकाज पर नियंत्रण कायम करने में और देर करना ठीक नहीं है।

नवभारत टाइम्स से साभार

आई.एस.एस.टी. गतिविधियां

ग्रीन जॉब्स प्रोग्राम : समीक्षा

आईएसएसटी ने अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के लिए देश में चल रहे ग्रीन जॉब्स कार्यक्रम की समीक्षा की। इस समीक्षा में क्षेत्रीय नीति निर्धारण की दृष्टि से भविष्य के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण सुझावों की ओर संकेत किया गया है।

यह कार्यक्रम अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, अंतर्राष्ट्रीय नियोक्ता संगठन और अंतर्राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन राज्यसंघ की संयुक्त पहल है, जलवायु परिवर्तन के इस दौर में सरकारों, नियोक्ताओं और ट्रेड यूनियनों को सम्माननीय स्थायी काम के लिए प्रोत्साहन देते हैं।

लड़कियों की शिक्षा के लिए दिशा–निर्देश

आईएसएसटी में लड़कियों की शिक्षा के लिए दिशा–निर्देश तैयार करने पर अध्ययन चल रहा है। इससे पूरे देश में जेंडर समानता और समान दर्जे की प्राथमिक शिक्षा को बढ़ाने में सहयोग मिलेगा। इस अध्ययन का उद्देश्य यूनिसेफ को लड़कियों की शिक्षा के क्षेत्र में तकनीकी और दिशा–निर्देश तैयार करने में सहयोग देना है। इस अध्ययन में क्षेत्रीय आंकड़ों और जानकारियों को एकत्र करके दिशा–निर्देश में एक साथ रखा जाएगा। लड़कियों की शिक्षा के कार्यक्रम के क्रियान्वयन और प्लानिंग के लिए ये दिशा–निर्देश मानव संसाधन मंत्रालय में उपलब्ध होगा।

इसके अलावा आईएसएसटी प्रायमरी शिक्षा पर हुए शोध अध्ययनों पर आधारित एक विश्लेषणात्मक परचा भी तैयार करेगा। इस अध्ययन में प्राथमिक शिक्षा में जेंडर असमानता को कम करने के लिए कुछ प्रमुख सुझाव दिए जायेंगे। यह अध्ययन यूनिसेफ के सहयोग से किया जा रहा है।

मानव विकास पर यूएनडीपी–प्लानिंग कमीशन कार्यक्रम

मानव विकास पर यूएनडीपी–प्लानिंग कमीशन कार्यक्रम (1999–2009) के मूल्यांकन का काम यूएनडीपी, दिल्ली द्वारा आईएसएसटी को सौंपा गया है। यूएनडीपी द्वारा देश में मानव विकास के विचार के क्रियान्वयन में सक्रियता से जुड़े दस वर्ष पूरे होने पर यह मूल्यांकन अध्ययन करवाया जा रहा है।

इस मूल्यांकन में संग्रहित सामग्री और नई निर्मित सामग्री दोनों ही तरीकों को अपनाया जाएगा और पूरे विश्लेषण में जेंडर का ध्यान रखा जाएगा। सैद्धांतिक रूप से कार्यक्रम में हुआ बदलाव व्यवहार में सुनिश्चित हो अध्ययन के निष्कर्ष में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाएगा।

मूल्यांकन अध्ययन : हरयाणा में मशरूम की खेती

पिछले दिनों आईएसएसटी ने भारत सरकार के महिला और बाल विकास विभाग की स्टेप योजना के अंतर्गत रोहतक, हरयाणा में चल रहे एक प्रोजेक्ट का मूल्यांकन अध्ययन किया। यह योजना है हरयाणा नव युवक कला संगम, रोहतक, हरयाणा द्वारा संचालित मशरूम खेती का प्रशिक्षण।

इस प्रशिक्षण से महिलाओं के जीवन स्तर पर क्या प्रभाव पड़ा है, इस योजना के अंतर्गत प्रस्तावित गतिविधियां पूरी हुई हैं या नहीं, यदि नहीं तो उसका कारण। इस प्रशिक्षण के बाद कितनी महिलाओं ने मशरूम की खेती शुरू की, मशरूम खेती से औसत कितनी आमदनी होती है, क्या यह परिवार की अतिरिक्त आमदनी है ? महिलाओं की घर के अन्य कामों की अपेक्षा मशरूम खेती के बारे में क्या प्रतिक्रिया है। मशरूम की खेती, बिक्री या इससे जुड़ा कोई अन्य काम करना क्या महिलाओं की विवशता है ? स्वास्थ्य, शिक्षा, अधिकारों के बारे में नई जानकारी और जागरूकता आदि संदर्भ में क्या महिलाओं के लिए यह प्रशिक्षण बहुत शिक्षाप्रद रहा। क्या स्वयं सहायता समूह बनाये गये, यदि बनाये गये तो क्या ये समूह अभी भी कार्यरत हैं। इन समूहों का कोई संगठन बनाया गया आदि बातों की पड़ताल की गई।

इस मूल्यांकन के लिए सर्वे, समूह चर्चा, इंटरव्यू जैसे माध्यमों को अपनाया गया। संस्था के निदेशक और प्रोजेक्ट स्टाफ से इस योजना के बारे में विस्तार से चर्चा हुई। कार्यक्रम प्रबंधक ने भी इस योजना के बारे में विस्तार से बताया। इससे योजना की शुरुआत से राज्य की भूमिका के बारे में हमारी समझ बढ़ी।

विभिन्न स्वयं सहायता समूह की 10 से 20 महिलाओं के समूह के साथ समूह चर्चा की गई। प्रशिक्षण की जानकारी लेने के लिए 273 महिलाओं से बातचीत की गई।

जेंडर एंड पार्टिसिपेटरी डेवलपमेंट : इवेल्यूएशन कन्सर्न

आईएसएसटी, इंटरनेशनल डेवलपमेंट रिसर्च सेंटर के आर्थिक सहयोग से उपरोक्त विषय पर एक अध्ययन कर रहा है। इस अध्ययन के अंतर्गत 26–27 अगस्त 2010 को एक वर्कशॉप आयोजित की गई। इस वर्कशॉप का मुख्य उद्देश्य मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार लाने का प्रयास रहा है, ताकि महिलाओं पर किए जा रहे अध्ययनों के प्रति पारदर्शिता और जेंडर संवेदनशीलता बढ़ सके।

इस दो दिवसीय वर्कशॉप में मूल्यांकन अध्ययनों के अनुभवों पर आधारित कुछ पेपर प्रस्तुत किये गये। इन परचों में मूल्यांकन का तरीका, अनुभव और मूल्यांकन से संबंधित साहित्य की समीक्षा पर प्रकाश डाला गया है। इस वर्कशॉप में शोधकर्ताओं, विषय विशेषज्ञों और नीति निर्धारकों ने हिस्सा लिया।

दिल्ली में 'सेवा' का काम : मूल्यांकन

'सेवा भारत' सब्जी बेचने वालों, भवन निर्माण मजदूर और घर में कशीदाकारी करने वालों के बीच योग्यता निर्माण, उसे बढ़ावा देने और जीविका को सुरक्षित बनाने का काम कर रहा है। सेवा भारत के इस काम के असर को समझने के लिए आईएसएसटी ने सितंबर 2008 में एक बेसलाइन अध्ययन किया था। इन दो वर्षों में सेवा भारत की पहल से इन लोगों के जीवन में क्या परिवर्तन हुआ है, इसे समझने के लिए एंडलाइन अध्ययन किया है। यह अध्ययन सर्वे, केस स्टडी और 'सेवा भारत' के साथ बातचीत के माध्यम से किया गया।

बस्ती विकास केंद्र

आईएसएसटी द्वारा पूर्वी दिल्ली में कल्याणपुरी स्थित साथी सेंटर से चलायी जा रही बस्ती विकास आधारित गतिविधियों के कारण इन बस्तियों में आईएसएसटी की अपनी एक पहचान बन गई है। जानकारी, शिक्षा और संवाद के माध्यम से युवा वर्ग को जागरूक बनाना इसका मुख्य लक्ष्य है। इसके लिए समूह चर्चा, गोष्ठियां, नाट्य समूह, फिल्म क्लब, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि विभिन्न गतिविधियां चलायी जाती हैं।

छः वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए 'बचपन' कार्यक्रम भी चलाया जाता है। इस कार्यक्रम के लिए भारतीय प्रतिष्ठान (एनएफआई) से सहयोग मिला है।

आईएसएसटी कम्युनिटी कॉलेज

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इगनू) द्वारा शुरू की गई वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था की एक नई पहल है – आईएसएसटी कम्युनिटी

कॉलेज।

इसके अंतर्गत दो पाठ्यक्रमों की शुरुआत की गई है। फंक्शनल इंग्लिश और कम्प्यूटर की बुनियादी जानकारी। दोनों ही पाठ्यक्रमों की अवधि छः माह है। पाठ्यक्रमों के सफलतापूर्वक समापन पर इगनू द्वारा प्रमाणपत्र दिए जायेंगे।

जुलाई 2010 में आईएसएसटी कम्युनिटी कॉलेज का एक वर्ष पूरा हुआ। जून 2010 में फंक्शनल इंग्लिश के पहले दो छात्र समूह और कम्प्यूटर प्रशिक्षण के पहले छात्र समूह की पहली परीक्षा हुई। इस वर्ष लगभग 80 बच्चों ने इन पाठ्यक्रमों के लिए नाम दर्ज कराया है।

सामाजिक सुविधा संगम

आईएसएसटी जीआरसी – सुविधा केंद्र को चलते हुए लगभग एक वर्ष हो गया है। बस्ती के लिए उपलब्ध सरकारी सेवाओं और सुविधाओं की जानकारी से इन लोगों में जो अत्यधिक उत्साह और उम्मीदें हैं, उनकी प्रत्यक्ष गवाह है– आईएसएसटी जीआरसी सेंटर।

आईएसएसटी जीआरसी में निम्नलिखित सेवायें उपलब्ध हैं – स्वास्थ्य कैम्प, पौष्टिक आहार कैम्प, हैल्थ क्लीनिक, लीगल काउंसलिंग, स्वयं सहायता समूह, अनौपचारिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा और सर्वे में सबसे अधिक मांग किए जाने वाले दो कोर्स कटिंग और टेलरिंग का प्रशिक्षण। बस्ती की युवा लड़कियों ने वोकेशनल कोर्सों में विशेष रुचि दिखाई है। बस्ती के लोगों को गतिशील बनाने, जानकारी देने के लिए कम्युनिटी मोबिलाइज़र्स नियमित रूप से बस्ती जाते हैं। सेंटर द्वारा चलाये जाने वाले हैल्थ कैंप में सभी उम्र के लोग अच्छी संख्या में आते हैं। हैल्थ क्लीनिक में पुरुषों की अपेक्षा महिलायें ज्यादा आती हैं। पौष्टिक आहार कैम्प में भी अच्छी संख्या में महिलायें आती हैं। इस कैंप में इन्हें बीमारी, गर्भावस्था, बाल्यावस्था आदि के लिए किस तरह के पौष्टिक आहार की जरूरत होती है, उसका क्या महत्त्व है आदि बातों की जानकारी के साथ ही विभिन्न अवस्था में दिया जाने वाले पौष्टिक आहार को बनाकर भी दिखाया जाता है।

अनौपचारिक शिक्षा में कल्याणपुरी इलाके के युवा लड़के और लड़कियां दोनों ही आते हैं। इनमें से ज्यादातर लड़के–लड़कियां ऐसे हैं, जो कभी स्कूल गए ही नहीं या किसी वजह से बीच में ही पढ़ाई छोड़नी पड़ी है। इस कार्यक्रम की एक बड़ी उपलब्धि यह रही कि कार्यक्रम की समाप्ति पर बहुत–से बच्चों ने ओपन स्कूल में एडमीशन लिया।

कानूनी परामर्श कार्यक्रम में अधिक से अधिक लोग आएं, इसके लिए बस्ती के लोगों को प्रोत्साहित करने की ज़रूरत है। हालांकि बड़े पैमाने पर हुए जागरूकता सत्र में बड़ी संख्या में लोगों ने हिस्सा लिया। आज तक आईएसएसडी जीआरसी के 6 स्वयं सहायता समूह बन गए हैं, इनमें से तीन समूह राष्ट्रीकृत बैंक से संबद्ध हो गए है। यह योजना धीमी गति, लेकिन मजबूती के साथ आगे बढ़ रही है।

जेंडर पॉलिसी फोरम

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट और इंडिया हैबिटेट सेंटर द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित जेंडर पॉलिसी फोरम श्रृंखला के उन्नीसवें सत्र का आयोजन 27 अगस्त 2010 को हुआ। यह आयोजन इंडिया हैबिटेट सेंटर के कैजुरीना सभागार में सम्पन्न हुआ।

इस चर्चा की प्रमुख वक्ता थीं – प्रोफेसर अलका बासु। डिपार्टमेंट ऑफ डेवलपमेंट सोशियोलॉजी, कॉरनेल युनिवर्सिटी, न्यूयार्क और विज़िटिंग प्रोफेसर, सेंटर फॉर सोशल मेडिसिन एंड कम्युनिटी हैल्थ, जवाहर लाल नेहरू युनिवर्सिटी, नई दिल्ली। चर्चा का विषय था वीमेंस एम्पॉवरमेंट/डोमेस्टिक डिसिप्लिन ? "रिकन्साइलिंग द एविडेंस ऑन फीमेल एजुकेशन, जेंडर इक्वेलिटी एंड चाइल्ड हैल्थ इन हिस्टॉरिकल एंड कन्टेम्परेरी पॉपुलेशंस"।

आई.एस.एस.टी.,
अपर ग्राउंड फ्लोर, कोर 6–ए, इंडिया हैबिटेट सैंटर, लोधी रोड,नई दिल्ली – 110 003 द्वारा प्रकाशित
संयोजन : मंजुश्री मिश्र, साज–सज्जा : दीपा मेहरा
ई–मेल : isstdel@isst-india.org
वेबसाइट : www.isst-india.org
फोन : 91-11-47682222, 47682234

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट

समाचार पत्रिका

वर्ष 17, अंक 4

अक्टूबर – दिसंबर 2010

मानव विकास : धीमी गति
हरिवंश चतुर्वेदी

सेफ वर्किंग प्लेस

दुनिया में बढ़ रही है महिला शासकों की स्वीकार्यता
जूलिया गिलार्ड

आई.एस.एस.टी. समाचार

केवल निजी वितरण के लिए

यह अंक

विकास की सही स्थिति सामने लाने के लिए यूएनडीपी ने तीस वर्ष पहले मानव विकास रिपोर्ट प्रकाशित करना शुरू किया था। इस रिपोर्ट में दुनिया के विभिन्न देशों से हम कितने आगे हैं या पीछे यह भी पता चलता है। यूएनडीपी द्वारा जारी मानव विकास रिपोर्ट – 2010 में दुनिया के 169 देशों की सूची में भारत का स्थान 119 है। निश्चित ही हमारी स्थिति दयनीय है।

मानव विकास की इस धीमी गति को कैसे गतिवान बनाया जाए हमारे नीति निर्धारकों, राजनेताओं, सरकारी अर्थशास्त्रियों आदि के सामने एक चुनौती है।

इस रिपोर्ट के बारे में बता रहे हैं – हरिवंश चतुर्वेदी।

लंबे समय से प्रतीक्षित महिला यौन उत्पीड़न रक्षा विधेयक – 2010 को केंद्रीय मंत्रीमंडल ने मंजूरी दे दी है। उम्मीद है इस विधेयक को जल्दी ही कानूनी रूप भी मिल जाएगा। महिलाएं इस कानून का पूरा लाभ उठा सकें, इसके लिए उनमें आत्मविश्वास पैदा करने की भी जरूरत है।

भले ही बहुत धीमी गति और संख्या भी बहुत कम है, लेकिन धीरे – धीरे राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्त्व बढ़ रहा है। इस अंक में प्रस्तुत है दुनिया के विभिन्न देशों में राजनीति में महिलाओं की भागीदारी।

इसके साथ ही प्रस्तुत है आईएसएसटी की विभिन्न गतिविधियां।

मानव विकास : धीमी गति

हरिवंश चतुर्वेदी

हमने आर्थिक दृष्टि से भले ही प्रगति की हो, लेकिन शिक्षा, स्वास्थ्य और आर्थिक–सामाजिक बराबरी के पैमानों पर हम अब भी खासे पिछड़े हुए हैं। हाल ही में यूएनडीपी द्वारा जारी मानव विकास रिपोर्ट–2010 में 169 देशों की सूची में भारत को 119वां स्थान मिला है, जबकि चीन उससे कहीं बेहतर 89वें स्थान पर है। इस रिपोर्ट के अनुसार, भारत का मानव विकास सूचकांक 0519 है जो कि दक्षिण एशिया के देशों के सूचकांक 0516 के लगभग बराबर है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की एजेंसी यूएनडीपी ने तीन दशक पहले दुनिया के तमाम देशों के लिए मानव विकास सूचकांक प्रकाशित करना शुरू किया था। इसका कारण यह था कि आर्थिक प्रगति का मूल्यांकन केवल सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) की सालाना वृद्धि से ही नहीं मापा जाना चाहिए। विकास की सच्ची तस्वीर तभी सामने आएगी, जब शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और विषमता में कमी के आंकड़े सामने आयें। मानव विकास के बारे में यूएनडीपी का कहना है, यह लोगों के लिए अवसरों को बढ़ाने की प्रक्रिया है। विकास का मूल उद्देश्य ऐसा वातावरण तैयार करना है, जिससे कि आम लोग स्वस्थ, लंबी और सार्थक जिंदगी जी सकें।

हालांकि यूएनडीपी यह हरगिज़ नहीं मानता कि भारत में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और आर्थिक–सामाजिक समानता के क्षेत्र में कोई तरक्की नहीं हुई है। 1980 और 2010 के बीच के 30 वर्ष में भारत का मानव विकास सूचकांक 0320 से बढ़कर 0519 हो गया। इस दौरान भारत में औसत आयु 55 वर्ष से बढ़कर 64 वर्ष हो गई और प्रति व्यक्ति आय में 254 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई।

इस साल जो रिपोर्ट जारी हुई, उसका शीर्षक था, 'राष्ट्रों की असली दौलत : मानव विकास का रास्ता'। रिपोर्ट में 169 देशों की सूची में पहले सौ देशों में भी भारत को जगह न मिलना भारतवासियों के लिए शर्मनाक है। चीन का 69वें स्थान पर होना समझ में आता है, किंतु श्रीलंका जैसे हमारे पड़ौसी देश का भी 91वें स्थान पर होना हमें सोचने के लिए मजबूर करता है कि आखिर क्यों हम मानव विकास सूचकांक में इतने पिछड़े माने जाते हैं ? चार नवंबर को यह रिपोर्ट जारी करते समय यूएनडीपी की स्थानीय प्रतिनिधि पेट्रिश कोइर बिजोट का कहना था कि भारत के मानव विकास सूचकांक के मूल्य में 30 प्रतिशत कमी हो जाती है, जब उसे असमानता से समायोजित किया जाता है।

हमारे देश में गरीब और अमीर के बीच बढ़ रही असमानता मानव विकास की तरक्की को सभी मोर्चों पर रोक रही है। मानव विकास रिपोर्ट में इस बार तीन अतिरिक्त पैमाने प्रयोग किए गए हैं, जो भारत के मानव विकास की प्रगति को कम कर देते हैं। ये नये पैमाने मानव विकास सूचकांक को आर्थिक और लैंगिक असमानता से तो समयोजित करते ही हैं, गरीबी के लिए शुरू किया गया एक नया पैमाना बहुआयामी निर्धनता सूचकांक भी इसको प्रभावित करता है। इन तीन नये पैमानों का उपयोग किये जाने के कारण भारत का मानव विकास सूचकांक नीचे गिर जाता है। वर्ष 2010 के लिए भारत का सूचकांक 0519 जब असमानता के लिए 30 प्रतिशत कम किया जाता है तो यह सिर्फ 0365 रह जाता है। बांग्लादेश और पाकिस्तान को भी असमानता के कारण 29 और 32 प्रतिशत का नुकसान हुआ है। समूचे दक्षिण एशिया के मानव विकास सूचकांक में असमानता के कारण लगभग 33 प्रतिशत कमी पाई गई है।

यूएनडीपी के मानव विकास सूचकांक में इस बार लैंगिक असमानता सूचकांक का भी प्रयोग किया गया है। इस नये मापदंड पर भी भारत खरा नहीं उतरता है। हमारी संसद में सिर्फ नौ प्रतिशत महिलाएं हैं और 27 प्रतिशत लड़कियां ही माध्यमिक और उच्च शिक्षा हासिल कर पाती हैं। प्रत्येक एक लाख बच्चों के जन्म के दौरान 450 माताओं की मृत्यु हो जाती है। श्रम बाजार में महिलाओं की भागीदारी 36 प्रतिशत है, पुरुषों की भागीदारी 85 प्रतिशत पाई गई है। इन सभी लैंगिक असमानताओं

के कारण सन् 2008 में 138 देशों की सूची में भारत का लैंगिक असमानता सूचकांक में 122वां स्थान था।

यूएनडीपी ने इस बार मानव विकास सूचकांक तैयार करने के लिए जिस बहुआयामी निर्धनता सूचकांक का इस्तेमाल किया है, उसके अंतर्गत एक ही परिवार के सदस्यों में पाये जाने वाले शिक्षा, स्वास्थ्य और जीवन स्तर से संबंधित अभावों पर ध्यान दिया गया है। उदाहरण के लिए भारत के निर्धन परिवारों में लड़कियों को न पढ़ाना, खानपान में लड़के–लड़की के बीच भेदभाव, वृद्धों की उपेक्षा ऐसी प्रवृत्तियां हैं, जो मानव विकास की विरोधी मानी गई हैं। रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 55 प्रतिशत जनसंख्या बहुआयामी निर्धनता की शिकार है और अतिरिक्त 16 प्रतिशत के शिकार होने की आशंका है। स्पष्ट है कि यूएनडीपी गरीबी को सिर्फ आय से नहीं जोड़ती, बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य, लिंगभेद और जीवन स्तर से भी जोड़ कर देखती है। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में बहुआयामी निर्धनता, आय पर आधारित गरीबी से 14 प्रतिशत अधिक है यानी भारत में गरीबी रेखा से ऊपर के लोगों में शिक्षा, स्वास्थ्य और जीवन दशाओं से संबंधित अभाव पाये जा सकते हैं।

मानव विकास सूचकांक में भारत की दयनीय स्थिति हमें बाध्य करती है कि हम आजादी के बाद के 63 वर्ष के आर्थिक विकास की निर्ममता से पड़ताल करें। यह भी सोचें कि केरल, पंजाब और तमिलनाडु जैसे कुछ प्रदेश मानव विकास की दिशा में कैसे प्रगति कर पाए ? हमें उन राज्यों की भी पहचान करनी पड़ेगी, जो भारत की मानव विकास की रफ्तार को धीमा कर रहे हैं। इसके पहले की रिपोर्ट में कहा गया था कि भारत के आठ राज्यों – बिहार, उत्तर–प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड में वैसी ही गरीबी है, जो अफ्रीका के कुछ अत्यंत निर्धन देशों में पाई जाती है। सरकारी आंकड़े भारत में गरीबों की संख्या भले ही 29 प्रतिशत बताएं, लेकिन यूएनडीपी के अनुसार 55 प्रतिशत भारतीय निर्धन हैं।

यह रिपोर्ट देश के नीति निर्धारकों, राजनेताओं, सरकारी अर्थशास्त्रियों और नौकरशाहों के लिए एक चेतावनी है। अब उन्हें गरीबी को सिर्फ आर्थिक आंकड़ों के आधार पर दूर करने की प्रवृत्ति का जल्दी से जल्दी परित्याग करना होगा, नहीं तो प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाली यह रिपोर्ट हमारे मुंह पर कालिख पोतती रहेगी।

नवभारत टाइम्स से साभार

सेफ वर्किंग प्लेस

केंद्रीय मंत्रीमंडल ने महिला यौन उत्पीड़न रक्षा विधेयक – 2010 को मंजूरी देकर कामकाजी महिलाओं को काफी राहत दी है। इस बिल का उद्देश्य काम की जगह पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न को रोकना है। इसमें संगठित, असंगठित और प्राइवेट तथा पब्लिक सेक्टर भी शामिल किए गए हैं। यह विधेयक सिर्फ किसी दफ्तर में नौकरी करने वाली महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने की बात नहीं करता, बल्कि इसके दायरे में उस ऑफिस में किसी काम से आने वाली दूसरी महिलाएं भी शामिल हैं। इस बिल की लंबे समय से प्रतीक्षा थी। यूपीए सरकार ने महिलाओं के पक्ष में कई महत्त्वपूर्ण फैसले लिए हैं। इस बिल को उसी सिलसिले की एक कड़ी रूप में देखा जा सकता है। उम्मीद की जानी चाहिए कि यह शीघ्र ही कानून का रूप ले लेगा। सामाजिक–आर्थिक विकास की प्रक्रिया ने महिलाओं को आगे आने के काफी अवसर उपलब्ध कराए हैं। अब बड़ी संख्या में महिलाएं विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी कर रही हैं। लेकिन समाज का पुरुषवादी ढांचा अब भी बुनियादी रूप से नहीं बदला है। शायद यही वजह है कि स्त्रियों को कार्यस्थल पर पुरुषों का असहज व्यवहार झेलना पड़ता है। लेकिन यह केवल भारत की समस्या नहीं है। तमाम बड़े सामाजिक बदलावों के बावजूद विकसित देशों में भी यह समस्या बनी हुई है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा कुछ समय पहले 23 देशों में कराये गये एक अध्ययन के अनुसार 15 प्रतिशत से भी ज्यादा कामकाजी

महिलाओं को यौन संबंधों की मांग से लेकर छींटाकशी तक, किसी न किसी तरह का यौन उत्पीड़न झेलना पड़ा। सर्वे में शामिल हर 12 में से एक महिला को इसकी वजह से नौकरी तक छोड़नी पड़ी थी या फिर उन्हें बर्खास्त कर दिया गया था। आज कई विकसित देशों ने इस मामले में काफी कड़े कानून बनाए हैं, लेकिन हमारे देश में अब तक ऐसा नहीं हो पाया था। कानून बन जाने से उन लोगों में थोड़ा भय पैदा होगा, जो महिला सहकर्मियों या अधीनस्थों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं। लेकिन भारत में एक समस्या यह है कि आमतौर पर महिलाएं शिकायत लेकर सामने नहीं आतीं। उन्हें लगता है कि इससे कहीं उनकी मुश्किलें और ज्यादा न बढ़ जाएं। लोगों को उनकी शिकायतों पर अविश्वास करने की आदत–सी है। प्रायः आरोप लगाने वाली महिला के चाल–चलन पर ही सवाल उठा दिए जाते हैं। महिलाएं अपने परिवार की बदनामी के डर से इस झमेले में नहीं पड़ना चाहतीं। उन्हें लगता है कि किसी तरह का विवाद होने पर उनका परिवार परेशान होगा और उनकी नौकरी भी छुड़वा सकता है। इसीलिए यौन उत्पीड़न पर कानून बनाने के साथ–साथ यह भी जरूरी है कि महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा किया जाए। इसके लिए ऐसे प्रयास करने होंगे जिससे स्त्री–पुरुष की बराबरी का भाव मजबूत हो।

साभार : संपादकीय, नवभारत टाइम्स

दुनिया में बढ़ रही है महिला शासकों की स्वीकार्यता

जूलिया गिलार्ड

क्या शासन की बागडोर महिलाओं के हाथ में होनी चाहिए ? हमारे देश में स्वर्गीय इंदिरा गांधी के शासनकाल को कोई नहीं भूलता। श्रीमती प्रतिभा पाटिल का राष्ट्रपति होना भी हमें गौरवान्वित करता है। बदलाव की यह बयार पूरी दुनिया में बह चली है। हाल में ऑस्ट्रेलिया के इतिहास में पहली बार किसी महिला ने सत्ता हासिल की है। कुछ प्रमुख महिला राजनेताओं पर और शासन में महिलाओं की भागीदारी पर एक नज़र :

ऑस्ट्रेलिया के इतिहास में पहली बार कोई महिला प्रधानमंत्री बनी हैं। ये हैं 49 वर्षीय जूलिया गिलार्ड। हाल में उन्हें सत्ताधारी ऑस्ट्रेलिया लेबर पार्टी का मुखिया चुना गया और इस तरह उन्होंने पूर्व प्रधानमंत्री केविन रड की जगह ली है। जूलिया ऑस्ट्रेलिया की 27वीं प्रधानमंत्री हैं। वे पहली बार 1998 में लैलोर सीट से लेबर पार्टी के लिए चुनी गई थीं। वर्ष 2007 के चुनाव में लेबर पार्टी की जीत के बाद उन्हें डिप्टी प्राइम मिनिस्टर बनाया गया था।

जर्मनी में भी ऐसा बदलाव आज से पांच वर्ष पहले हो चुका है। इस देश के इतिहास में 2005 में पहली बार कोई महिला देश की चांसलर बनी। यह सौभाग्य 56 वर्षीय एंजेला मर्केल को मिला। चांसलर के रूप में वे एक गठबंधन सरकार चला रही हैं। मर्केल जी–8 की अध्यक्ष भी हैं। मार्गेट थ्रैचर के बाद यह दूसरा मौका है जब कोई महिला इसकी अध्यक्ष है।

फिनलैंड में भी ऐसा पहली बार हुआ है जब कोई महिला इस देश की राष्ट्रपति बनी है। फिनलैंड की 11वीं राष्ट्रपति के रूप में यह गौरव 67 वर्षीय तारजा कारिना हैलोनेन ने हासिल किया है। ट्रेड यूनियनों और गैर सरकारी संगठनों में भी काम करने का उन्हें लंबा अनुभव है। वे पहली बार 1979 में चुनकर फिनलैंड की संसद में पहुंची थीं।

अमेरिका 63 वर्षीय हिलेरी क्लिंटन बिल क्लिंटन की पत्नी के तौर पर अमेरिका की फर्स्ट लेडी रह चुकी हैं। वे 2001 से 2009 तक न्यूयार्क से सीनेटर रही हैं। 2008 के राष्ट्रपति चुनावों में हिलेरी डेमोक्रेटिक पार्टी की तरफ से इस पद के लिए प्रमुख उम्मीदवार थीं। फिलहाल वे विदेश मंत्री हैं।

भारत यह हमारे देश का सौभाग्य है कि पहली बार कोई महिला राष्ट्रपति पद की शोभा बढ़ा रही है। वे देश की 12वीं राष्ट्रपति हैं। 76 वर्षीय श्रीमती

पाटिल ने अपने प्रोफेशनल करियर की शुरुआत महाराष्ट्र की जलगांव जिला अदालत में वकालत से की थी। 27 साल की उम्र में उन्होंने जलगांव विधानसभा क्षेत्र से चुनाव जीता था। वे आज तक किसी चुनाव में नहीं हारी हैं।

कम से कम 30% की जरूरत

संयुक्त राष्ट्र ने 1995 में एक लक्ष्य तय किया था कि शासन में महिलाओं की भागीदारी कम से कम 30 प्रतिशत तक होनी चाहिए। पर इंटर–पार्लियामेंटरी यूनियन के अनुसार दुनिया में फिलहाल यह प्रतिशत 19.2 है। आईपीयू के अनुसार दोनों सदनों को मिलाकर पूरी दुनिया के कुल सांसदों की संख्या 44,649 है। इनमें 35,657 पुरुष और 8,460 महिलाएं हैं। इस मामले में शीर्ष पर नार्वे की सरकार (सेकंड कैबिनेट स्टोलटेनबर्ग) है, जहां के मंत्रिमंडल में आधे से ज्यादा महिलाएं हैं।

क्या है इतिहास

पहला उल्लेख सोवियत संघ के राज्य ट्युवान पीपुल्स रिपब्लिक का मिलता है, जहां 1940–44 के बीच खेरटेक एन्चिमा टोका नामक महिला हेड ऑफ द स्टेट रही थीं। इसी तरह 1953–54 के बीच मंगोलियन पीपुल्स रिपब्लिक की कमान सखबात्रयन यंजमा नाम की महिला ने संभाली थी। पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना की कमान 1968–1972 और फिर 1981 में सूंग चिंग–लिंग ने संभाली थी।

विभिन्न देशों में महिला सांसदों की भागीदारी	
नॉर्डिक देशों (स्वीडन, फिनलैंड आदि) में	41.1%
अमेरिकी देशों (मेक्सिको, कनाडा, कोलंबिया आदि) में	22.5%
सब–सहारा देशों (घाना, अंगोला आदि) में	19.0%
एशियाई देशों (भारत, चीन, श्रीलंका आदि) में	18.7%
पैसिफिक देशों (ऑस्ट्रेलिया, जापान आदि) में	13.2%
अरब देशों (सऊदी अरब, कुवैत आदि) में	11.1%
नेपाल	33%

आई.एस.एस.टी. गतिविधियां

ग्रीन जॉब्स प्रोग्राम : समीक्षा

आईएसएसटी ने अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के लिए देश में चल रहे ग्रीन जॉब्स कार्यक्रम की समीक्षा की। इस समीक्षा में क्षेत्रीय नीति निर्धारण की दृष्टि से भविष्य के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण सुझावों की ओर संकेत किया गया है।

यह कार्यक्रम अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, अंतर्राष्ट्रीय नियोक्ता संगठन और अंतर्राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन राज्यसंघ की संयुक्त पहल है, जलवायु परिवर्तन के इस दौर में सरकारों, नियोक्ताओं और ट्रेड यूनियनों को सम्माननीय स्थायी काम के लिए प्रोत्साहन देते हैं।

लड़कियों की शिक्षा के लिए दिशा–निर्देश

आईएसएसटी में लड़कियों की शिक्षा के लिए दिशा–निर्देश तैयार करने पर अध्ययन चल रहा है। इससे पूरे देश में जेंडर समानता और समान दर्जे की प्राथमिक शिक्षा को बढ़ाने में सहयोग मिलेगा। इस अध्ययन का उद्देश्य यूनिसेफ को लड़कियों की शिक्षा के क्षेत्र में तकनीकी और दिशा–निर्देश तैयार करने में सहयोग देना है। इस अध्ययन में क्षेत्रीय आंकड़ों और जानकारियों को एकत्र करके दिशा–निर्देश में एक साथ रखा जाएगा। लड़कियों

की शिक्षा के कार्यक्रम के क्रियान्वयन और प्लानिंग के लिए ये दिशा–निर्देश मानव संसाधन मंत्रालय में उपलब्ध होगा।

इसके अलावा आईएसएसटी प्रायमरी शिक्षा पर हुए शोध अध्ययनों पर आधारित एक विश्लेषणात्मक परचा भी तैयार करेगा। इस अध्ययन में प्राथमिक शिक्षा में जेंडर असमानता को कम करने के लिए कुछ प्रमुख सुझाव दिए जायेंगे। यह अध्ययन यूनिसेफ के सहयोग से किया जा रहा है।

मानव विकास पर यूएनडीपी–प्लानिंग कमीशन कार्यक्रम

मानव विकास पर यूएनडीपी–प्लानिंग कमीशन कार्यक्रम (1999–2009) के मूल्यांकन का काम यूएनडीपी, दिल्ली द्वारा आईएसएसटी को सौंपा गया है। देश में मानव विकास के विचार के क्रियान्वयन में यूएनडीपी की सक्रियता के दस वर्ष पूरे होने पर यह मूल्यांकन अध्ययन करवाया जा रहा है। इस मूल्यांकन में इस ढांचे की प्रमुखता, सार्थकता और निरंतरता – मानव संसाधन श्रृंखला का यूएनडीपी और देश के राष्ट्रीय और राज्य की प्राथमिकतायें; राष्ट्र, राज्य और जिले के मानव संसाधनों में असमानता; मानव विकास को मुख्यधारा में लाने के लिए राष्ट्र, राज्य और जिला स्तर पर नीति–निर्धारण, योजना बनाने और क्रियान्वयन आदि में भारत सरकार और यूएनडीपी की पहुंच– जैसे प्रश्नों को समझने का प्रयास किया जाएगा।

यह मूल्यांकन संग्रहित सामग्री और नई निर्मित सामग्री दोनों ही तरीकों पर आधारित होगा और पूरे विश्लेषण में जेंडर का ध्यान रखा जाएगा। कार्यक्रम में सैद्धांतिक रूप से जो बदलाव हुए हैं वे व्यवहार में भी आएं, अध्ययन के निष्कर्ष में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाएगा।

जेंडर एंड पार्टिसिपेटरी डेवलपमेंट : इवेल्यूएशन कन्सर्न

आईएसएसटी ने पिछले दिनों इंटरनेशनल डेवलपमेंट रिसर्च सेंटर के आर्थिक सहयोग से उपरोक्त विषय पर एक अध्ययन किया है। इस अध्ययन से संबंधित परचों पर चर्चा के लिए आईएसएसटी ने अगस्त 2010 में दो दिवसीय वर्कशॉप का आयोजन किया था। कुछ परचे 6–8 अक्टूबर 2010 को प्राग में हुई नवमीं यूरोपियन मूल्यांकन कांफ्रेंस और 25–29 अक्टूबर 2010 को दिल्ली में हुए सम्मेलन में पढ़े गए। इन परचों के प्रकाशन के लिए संपादन का काम चल रहा है।

दिल्ली में 'सेवा' का काम : मूल्यांकन

'सेवा भारत', दिल्ली सब्जी बेचने वालों, भवन निर्माण मजदूर और घर में कशीदाकारी करने वालों के बीच योग्यता निर्माण, उसे बढ़ावा देने और जीविका को सुरक्षित बनाने का काम कर रहा है। सेवा भारत के इस काम के असर को समझने के लिए आईएसएसटी ने सितंबर 2008 में एक बेसलाइन अध्ययन किया था। इन दो वर्षों में सेवा भारत की पहल से इन लोगों के जीवन में क्या परिवर्तन हुआ है, इसे समझने के लिए 2010 में एक एंडलाइन अध्ययन किया गया। यह अध्ययन सर्वे, केस स्टडी और 'सेवा भारत' के साथ बातचीत पर आधारित था। इस अध्ययन की रिपोर्ट सेवा भारत को सौंप दी गई है।

बस्ती विकास केंद्र

आईएसएसटी द्वारा पूर्वी दिल्ली में कल्याणपुरी स्थित साथी सेंटर से चलायी जा रही बस्ती विकास

आधारित गतिविधियों के कारण इन बस्तियों में आईएसएसटी की अपनी एक पहचान बन गई है। जानकारी, शिक्षा और संवाद के माध्यम से युवा वर्ग को जागरूक बनाना इसका मुख्य लक्ष्य है। इसके लिए समूह चर्चा, गोष्ठियां, नाट्य समूह, फिल्म क्लब, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि विभिन्न गतिविधियां चलायी जाती हैं।

छः वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए 'बचपन' कार्यक्रम भी चलाया जाता है। इस कार्यक्रम के लिए भारतीय प्रतिष्ठान (एनएफआई) से सहयोग मिला है।

पिछले कुछ वर्षों से आईएसएसटी साथी सेंटर बस्ती के लोगों के साथ 'सूचना के अधिकार' पर काम कर रहा है। पिछले तीन माह में साथी केंद्र के सहयोग से बस्ती में लगभग 80 लोगों ने 'सूचना के अधिकार' के अंतर्गत शिकायतें दर्ज की हैं। कल्याणपुरी में नवंबर में 'सूचना के अधिकार' विषय पर एक कार्यशाला भी आयोजित की गई।

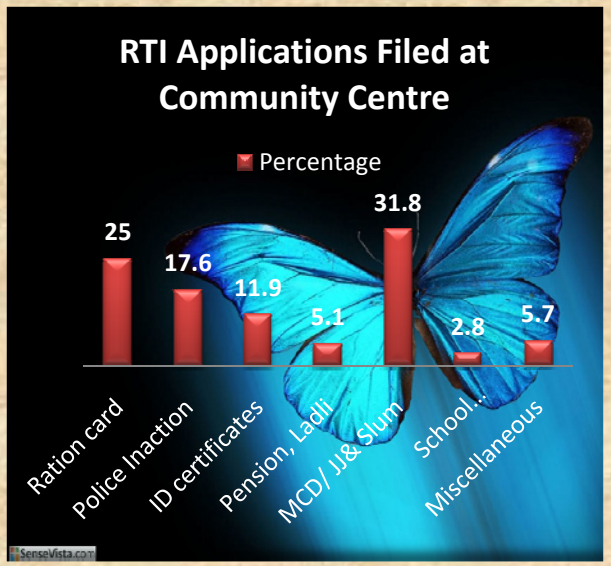

उपरोक्त तालिका कल्याणपुरी और आसपास के निवासियों द्वारा नवंबर 2009 से अक्टूबर 2010 तक एक वर्ष के दौरान दर्ज की गई लगभग 176 शिकायतों का विश्लेषण दर्शाती है।

उत्तराखंड सेवा निधि, अल्मोड़ा ने संस्था 13–14 अगस्त 2010 को अल्मोड़ा में सूचना के अधिकार पर कार्यशाला का आयोजन किया। कार्यशाला का संचालन आईएसएसटी कम्युनिटी सेंटर के मोहम्मद आशकीन अहमद और अमिता जोशी ने किया। इस प्रशिक्षण कार्यशाला में इस क्षेत्र के 25 गांवों में से लगभगभ 50 प्रशिक्षार्थियों ने हिस्सा लिया।

अक्टूबर 2010 में आईएसएसटी साथी सेंटर द्वारा आर्ट वर्कशॉप का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में बस्ती की महिलाओं और लड़कियों ने हिस्सा लिया। नवंबर में आईएसएसटी कम्युनिटी सदस्यों के लिए जीवन कौशल शिविर का आयोजन किया गया।

बस्ती के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम

आईएसएसटी साथी केंद्र, कल्याणपुरी में बस्ती के लिए दो सर्टिफिकिट कोर्स चलाए जा रहे हैं – कम्प्यूटर की बुनियादी जानकारी और फंक्शनल इंग्लिश। इन दोनों ही पाठ्यक्रमों की अवधि छः माह है। पाठ्यक्रम के सफलतापूर्वक समापन पर बच्चों को संबंधित विषय का प्रमाणपत्र दिया जाएगा। दिसंबर 2010 में लगभग 75 छात्र–छात्रायें उपरोक्त विषयों की परीक्षा में बैठे।

सामाजिक सुविधा संगम

आईएसएसटी जीआरसी – सुविधा केंद्र को चलते हुए लगभग एक वर्ष हो गया है। बस्ती के लिए उपलब्ध सरकारी सेवाओं और सुविधाओं की जानकारी से इन लोगों में जो अत्यधिक उत्साह और उम्मीदें हैं, उनका प्रत्यक्ष गवाह है – आईएसएसटी जीआरसी सेंटर।

आईएसएसटी जीआरसी में निम्नलिखित सेवायें उपलब्ध हैं – स्वास्थ्य कैम्प, पौष्टिक आहार कैम्प, हैल्थ क्लीनिक, लीगल काउंसलिंग, स्वयं सहायता समूह, अनौपचारिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा और सर्वे में सबसे अधिक मांग किए जाने वाले दो कोर्स कटिंग और टेलरिंग का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। बस्ती की युवा लड़कियों ने वोकेशनल कोर्सों में विशेष रुचि दिखाई। बस्ती के लोगों को गतिशील बनाने, जानकारी देने के लिए कम्युनिटी मोबिलाइज़र्स नियमित रूप से बस्ती जाते हैं। सेंटर द्वारा चलाये जाने वाले हैल्थ कैंप में सभी उम्र के लोग अच्छी संख्या में आते हैं। हैल्थ क्लीनिक में पुरुषों की अपेक्षा महिलायें ज्यादा आती हैं। पौष्टिक आहार

कैम्प में भी अच्छी संख्या में महिलायें आती हैं। इस कैंप में इन्हें बीमारी, गर्भावस्था, बाल्यावस्था आदि के लिए किस तरह के पौष्टिक आहार की जरूरत होती है, उसका क्या महत्त्व है आदि बातों की जानकारी दी जाती है। विभिन्न अवस्थाओं में दिया जाने वाला तरह–तरह का पौष्टिक आहार बनाकर भी दिखाया जाता है।

अनौपचारिक शिक्षा में कल्याणपुरी इलाके के युवा लड़के और लड़कियां दोनों ही आते हैं। इनमें से ज्यादातर लड़के–लड़कियां ऐसे हैं, जो कभी स्कूल गए ही नहीं या किसी वजह से बीच में ही पढ़ाई छोड़नी पड़ी है। इस कार्यक्रम की एक बड़ी उपलब्धि यह रही कि कार्यक्रम की समाप्ति पर बहुत–से बच्चों ने ओपन स्कूल में एडमीशन लिया।

कानूनी परामर्श कार्यक्रम में अधिक से अधिक लोग आएं, इसके लिए बस्ती के लोगों को प्रोत्साहित करने की ज़रूरत है। हालांकि बड़े पैमाने पर हुए जागरूकता सत्र में बड़ी संख्या में लोगों ने हिस्सा लिया। आज तक आईएसएसटी जीआरसी के 6 स्वयं सहायता समूह बन गए हैं, इनमें से तीन समूह राष्ट्रीयकृत बैंक से संबद्ध हो गए हैं। यह योजना मजबूती के साथ धीमी गति से बढ़ रही है।

जेंडर पॉलिसी फोरम

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़ ट्रस्ट और इंडिया हैबिटेट सेंटर द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित जेंडर पॉलिसी फोरम श्रृंखला के बीसवें सत्र का विषय था – 'फेमिनिज़म इन इंडिया टुडे'। यह आयोजन 10 दिसंबर 2010 को इंडिया हैबिटेट सेंटर के गुलमोहर सभागार में सम्पन्न हुआ।

इस चर्चा की प्रमुख वक्ता थीं – प्रोफेसर बीना अग्रवाल, निदेशक; इंस्टीट्यूट ऑफ इकानॉमिक ग्रोथ, दिल्ली, मधु पूर्णिमा किश्वर; संपादिका, 'मानुषी' तथा सीनियर फैलो, सेंटर फॉर स्टडी ऑफ डेवलपिंग सोसायटी, दिल्ली और मीना गोपाल; फैलो, नेहरू मेमोरियल म्यूज़ियम एंड लायब्रेरी, नई दिल्ली। सत्र की अध्यक्षता कर रही थीं– सुप्रसिद्ध लेखिका और पत्रकार मृणाल पांडे।

आई.एस.एस.टी.,
अपर ग्राउंड फ्लोर, कोर 6–ए,
इंडिया हैबिटेट सैंटर, लोधी रोड,
नई दिल्ली – 110 003 द्वारा प्रकाशित
संयोजन : मंजुश्री मिश्र, साज–सज्जा : दीपा मेहरा
ई–मेल : isstdel@isst-india.org
वेबसाइट : www.isst-india.org
फोन : 91-11-47682222, 47682234